सत्यमेव जयते

भारत सरकार

भारत
का
विधि
आयोग

विधि आयोग/Law Commission of India
पुस्तकालय/LIBRARY

भारत के उच्चतम न्यायालय में अनिवार्य भाषा के रूप में हिंदी प्रारंभ करने के लिए असाध्यता

रिपोर्ट सं. 216

दिसंबर, 2008

भारत का विधि आयोग

(रिपोर्ट सं. 214)

भारत के उच्चतम न्यायालय में अनिवार्य भाषा के रूप में हिंदी प्रारंभ करने के लिए असाध्यता

डा. एच. आर. भारद्वाज, केंद्रीय विधि और न्याय मंत्री, विधि और न्याय मंत्रालय, भारत सरकार को डा. न्यायमूर्ति एआर. लक्ष्मणन्, अध्यक्ष, भारत का विधि आयोग द्वारा 17 दिसंबर, 2009 को प्रस्तुत ।

18वें विधि आयोग का 1 सितंबर, 2006 से तीन वर्ष की अवधि के लिए भारत सरकार के विधि और न्याय मंत्रालय के विधि कार्य विभाग, नई दिल्ली के तारीख 16 अक्तूबर, 2006 के आदेश सं. ए-45012/1/2006-प्रशा.III (वि.का.) द्वारा गठन किया गया था ।

विधि आयोग अध्यक्ष, सदस्य-सचिव, एक पूर्णकालिक सदस्य और 7 अंशकालिक सदस्यों से मिलकर बना है ।

<u>अध्यक्ष</u>

माननीय डा. न्यायमूर्ति एआर. लक्ष्मणन्

<u>सदस्य-सचिव</u>

डा. ब्रह्म ए. अग्रवाल

<u>पूर्णकालिक सदस्य</u>

प्रो. डा. ताहिर महमूद

<u>अंशकालिक सदस्य</u>

डा. (श्रीमती) देविन्दर कुमारी रहेजा
डा. के. एन. चंद्रशेखरन पिल्लै
प्रो. (श्रीमती) लक्ष्मी जमभोलकर
श्रीमती कीर्ति सिंह
श्री न्यायमूर्ति आई. वेंकटनारायण
श्री ओ. पी. शर्मा
डा. (श्रीमती) श्यामल्हा पप्पू

विधि आयोग भारतीय विधि संस्थान भवन,
दूसरी मंजिल, भगवान दास रोड,
नई दिल्ली - **110 001** में अवस्थित है

विधि आयोग कर्मचारिवृंद

सदस्य - सचिव

डा. ब्रह्म ए. अग्रवाल

अनुसंधान कर्मचारिवृंद

श्री सुशील कुमार	:	संयुक्त सचिव एवं विधि अधिकारी
श्रीमती पवन शर्मा	:	अपर विधि अधिकारी
श्री जे. टी. सुलक्षण राव	:	अपर विधि अधिकारी
श्री ए. के. उपाध्याय	:	उप विधि अधिकारी
डा. वी. के. सिंह	:	सहायक विधि सलाहकार

प्रशासनिक कर्मचारिवृंद

श्री सुशील कुमार	:	संयुक्त सचिव एवं विधि अधिकारी
श्री डी. चौधरी	:	अवर सचिव
श्री एस. के. बसु	:	अनुभाग अधिकारी
श्रीमती रजनी शर्मा	:	सहायक पुस्तकालय और सूचना अधिकारी

इस रिपोर्ट का पाठ इंटरनेट पर http://www.lawcommissionofindia.nic.in पर उपलब्ध है

© भारत सरकार
भारत का विधि आयोग

इस दस्तावेज का पाठ (सरकारी चिह्नों को छोड़कर) किसी रूप विधान में या किसी माध्यम से निःशुल्क प्रत्युत्पादित किया जा सकता है परंतु यह कि उसको शुद्ध रूप से प्रत्युत्पादित किया जाए और उसका भ्रामक संदर्भ में उपयोग न किया जाए । इस सामग्री को सरकार के प्रतिलिप्यधिकार के रूप में अभिस्वीकार किया जाना चाहिए और दस्तावेज का नाम विनिर्दिष्ट किया जाना चाहिए ।

इस रिपोर्ट से संबंधित किसी पूछताछ के लिए सदस्य-सचिव को डाक द्वारा भारत का विधि आयोग, दूसरी मंजिल, भारतीय विधि संस्थान भवन, भगवान दास रोड, नई दिल्ली- **110 001**, भारत के पते पर पत्र भेजकर या ई-मेल द्वारा : **lci-dla@nic.in** पर संबोधित किया जाना चाहिए ।

डा. न्यायमूर्ति एआर. लक्ष्मणन्
(भूतपूर्व न्यायाधीश, भारत का उच्चतम न्यायालय)
अध्यक्ष, भारत का विधि आयोग

भा. वि. सं. भवन (दूसरा तल),
भगवान दास रोड,
नई दिल्ली-110001
टेली. : 91-11-23384475
फैक्स : 91-11-23383564

अ.शा.पत्र सं. 6(3)127/2006-वि.आ.(वि.अ.)

17 दिसंबर, 2008

प्रिय डा. भारद्वाज जी

मुझे "**भारत के उच्चतम न्यायालय में अनिवार्य भाषा के रूप में हिंदी प्रारंभ करने के लिए असाध्यता**" संबंधी विधि आयोग की 216वीं रिपोर्ट प्रस्तुत करते हुए अत्यधिक प्रसन्नता हो रही है ।

विधि आयोग को विधि और न्याय मंत्रालय के विधि कार्य विभाग से एक निर्देश प्राप्त हुआ था, विधि कार्य विभाग ने विधायी विभाग के संयुक्त सचिव और विधायी परामर्शी के तारीख 29.3.2006 के टिप्पण को संसदीय राजभाषा समिति की सिफारिशों की एक प्रति के साथ अग्रेषित किया था, जो उक्त समिति द्वारा राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय के तारीख 13.7.2005 के संकल्प सं. 11011/5/2003 में कथित क्रम सं. 16.8(घ) और 16.8(ङ) पर समिति की रिपोर्ट में की गई सिफारिशों पर विधि आयोग के विचार जानने के लिए था ।

उक्त समिति की रिपोर्ट के पैरा 16.8(घ) और 16.8(ङ) परिकल्पना करते हैं कि विधायी विभाग को हिंदी में मूल रूप से प्रारुपण करने का कार्य हाथ में लेने में समर्थ बनाने के लिए संविधान के अनुच्छेद 348 का संशोधन किया जा सकता है । संविधान के अनुच्छेद 348 के संशोधन के पश्चात्, उच्च न्यायालयों/उच्चतम न्यायालय से अपने निर्णयों और डिक्रियों को हिंदी में देना प्रारंभ करने के लिए कहा जाना चाहिए जिससे कि बड़ी संख्या में सरकारी विभाग, जो न्यायिक/अर्ध-न्यायिकृत्य कर रहे हैं, हिंदी में आदेश परिदत्त करने में समर्थ हो सके । इस समय ये विभाग हिंदी में

आदेश देने में असमर्थ हैं क्योंकि उनके आदेश के विरुद्ध अपील उच्च न्यायालयों/ उच्चतम न्यायालय में अंग्रेजी में संचालित की जानी होती है ।

विधि आयोग ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 348 का संशोधन करने के लिए प्रस्ताव पर संसदीय राजभाषा समिति की सिफारिशों के संबंध में भारत के उच्चतम न्यायालय के कुछ सेवानिवृत्त मुख्य न्यायमूर्तियों और न्यायाधीशों, भारत के विभिन्न भागों और विभिन्न राज्यों के विभिन्न विधि संगमों से वरिष्ठ अधिवक्ताओं को भी पत्र भेजे थे ।

पत्र के उत्तर में, विधि आयोग को भूतपूर्व उच्चतम न्यायालय के मुख्य न्यायमूर्तियों और उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों, वरिष्ठ अधिवक्ताओं, उच्च न्यायालय के अधिवक्ता संगमों से उक्त प्रस्ताव के संबंध में लिखित उत्तर प्राप्त हुए हैं । रिपोर्ट के अध्याय - III में ये व्यापक रूप से उद्धृत किए गए हैं ।

आयोग ने इस प्रकार प्राप्त विचारों का गहन रूप से अध्ययन किया है और एकमत होकर निम्नलिखित रूप में सिफारिश की है कि -

(i) भाषा किसी भी राष्ट्र के नागरिकों के लिए एक बहुत ही भावनात्मक मुद्दा है । इसमें एकबद्ध करने की एक बड़ी शक्ति है और यह राष्ट्रीय एकीकरण के लिए एक शक्तिशाली माध्यम है । कोई भी भाषा जनता के किसी वर्ग पर उसकी इच्छा के विरुद्ध थोपी नहीं जानी चाहिए, क्योंकि ऐसा करने से विपरीत परिणाम होने की संभावना हो सकती है ।

(ii) यह केवल विचार और अभिव्यक्ति का साधन मात्र नहीं है किंतु उच्चतर स्तर पर न्यायाधीशों के लिए यह उनकी विनिश्चय करने की प्रक्रिया का एकीकृत भाग है । न्यायाधीशों को दोनों पक्षों की प्रस्तुतियों को सुनना और समझना होता है और साम्यताओं का समायोजन करने के लिए विधि को लागू करना होता है । बहस/तर्क साधारणतया उच्चतर न्यायालयों में अंग्रेजी में किए जाते

हैं और भारतीय पद्धति के अधीन आधारभूत साहित्य प्राथमिक रूप से अंग्रेजी और अमेरिकन पाठ्य-पुस्तकों तथा निर्णयज विधियों पर आधारित है । अतः उच्चतर स्तर पर न्यायाधीशों को निर्णय देने की अपनी स्वयं की पद्धति विकसित करने के लिए स्वतंत्र छोड़ दिया जाना चाहिए ।

(iii) इस पर ध्यान देना विशेष रूप से महत्वपूर्ण है कि उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों के संबंध में राष्ट्रीय स्थानांतरण की नीति की दृष्टि से, यदि किसी ऐसे न्यायाधीश को किसी ऐसी भाषा में निर्णय देने के लिए विवश किया जाता है जिससे वह सुपरिचित नहीं है तो यह उसके लिए न्यायिक रूप से कार्य करने के लिए अत्यधिक कठिन हो सकता है । देश के एक भाग से दूसरे में स्थानांतरण पर उच्च न्यायालय के किसी न्यायाधीश से यह आशा नहीं की जाती है कि वह इस उम्र में नई भाषा सीखे और उसे निर्णयों को देने में लागू करे ।

(iv) किसी भी परिस्थिति में कोई भाषा उच्चतर न्यायपालिका के न्यायाधीशों पर नहीं थोपी जानी चाहिए और उन्हें उस भाषा में जिसे वे अधिमान दें, अपने निर्णय देने के लिए स्वतंत्र छोड़ दिया जाना चाहिए । यह याद रखना महत्वपूर्ण है कि प्रत्येक नागरिक, प्रत्येक न्यायालय को उच्चतम न्यायालय द्वारा अंतिम रूप से अधिकथित की गई विधि को समझने का अधिकार है और इस समय इस बात को समझा जाना चाहिए कि ऐसी कोई भाषा केवल अंग्रेजी है ।

(v) अंग्रेजी भाषा का उपयोग उच्च न्यायालयों से सर्वोच्च न्यायालय में वकीलों के जाने को भी सुकर बनाता है क्योंकि वे किसी भाषा संबंधी समस्या का सामना नहीं करते हैं और अंग्रेजी दोनों ही स्तरों पर भाषा रहती है । साधारण रूप से समाज का और उसके विभिन्न वर्गों का कोई सर्वेक्षण स्पष्ट रूप से उक्त प्रतिपादना की पुष्टि करेगा, जो अधिक वाद-विवाद को, विशेष रूप से वर्तमान राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक परिदृश्य में, स्वीकार नहीं करती है ।

(vi) तथापि यह स्वीकार किया जा सकता है कि जहां तक विधायी प्रारुपण का

संबंध है, प्रत्येक विधान का, यद्यपि वह प्राधिकृत रूप से अंग्रेजी में अधिनियमित किया जाता है, हिंदी में प्राधिकृत अनुवाद उसके साथ केंद्रीय स्तर पर हो सकता है । यही समानता केंद्रीय स्तर पर कार्यपालिका के कार्यों के संबंध में भी लागू की जा सकती है किंतु उच्चतर न्यायपालिका को वर्तमान सामाजिक संदर्भ में किसी भी प्रकार के, यहां तक कि अनुरोधात्मक परिवर्तन के भी, अधीन नहीं किया जाना चाहिए ।

सादर

भवदीय,

(डा. न्यायमूर्ति एआर. लक्ष्मणन्)

डा. एच. आर. भारद्वाज,
केंद्रीय विधि और न्याय मंत्री,
भारत सरकार,
विधि और न्याय मंत्रालय,
शास्त्री भवन,
नई दिल्ली - 110001

विषय-वस्तु

अध्याय		पृष्ठ सं.
अध्याय - I :	प्रस्तावना	
अध्याय - II :	भारत के संविधान के सुसंगत उपबंध	
अध्याय - III :	भारत के संविधान के अनुच्छेद 348 का संशोधन करने के लिए प्रस्ताव पर न्यायाधीशों, वरिष्ठ अधिवक्ताओं,उच्च न्यायालय अधिवक्ता संगमों के विचार	
अध्याय - IV :	निष्कर्ष और सिफारिशें	

भारत के उच्चतम न्यायालय में अनिवार्य भाषा के रूप में हिंदी प्रारंभ करने के लिए असाध्यता संबंधी रिपोर्ट

अध्याय - I

प्रस्तावना

यह रिपोर्ट संसदीय राजभाषा समिति की सिफारिशों के बारे में है जो राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय के संकल्प सं. 11011/5/2003-रा.भा.(अनुसंधान) तारीख 13.7.2005 में कथित क्रम सं. 16.8(घ) और 16.8(ङ) पर उसकी रिपोर्ट में की गई हैं ।

यह समीचीन है कि इस रिपोर्ट की मुख्य बातों का संक्षेप में कथन किया जाए ।

विधि आयोग को विधि और न्याय मंत्रालय के विधि कार्य विभाग से एक निर्देश प्राप्त हुआ था । विधि कार्य विभाग ने विधायी विभाग के संयुक्त सचिव और विधायी परामर्शी के तारीख 29.3.2006 के टिप्पण को संसदीय राजभाषा समिति की सिफारिशों की एक प्रति के साथ अग्रेषित किया था, जो उक्त समिति द्वारा राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय के तारीख 13.7.2005 के संकल्प सं. 11011/5/2003 में कथित क्रम सं. 16.8(घ) और 16.8(ङ) पर समिति की रिपोर्ट में की गई सिफारिशों पर विधि आयोग के विचार जानने के लिए था । संसदीय राजभाषा समिति का राजभाषा अधिनियम, 1963 की धारा 4(1) के अधीन 1976 में गठन किया गया था । उक्त समिति ने राष्ट्रपति को अपनी रिपोर्ट के सातवें भाग को प्रस्तुत किया था जो, अन्य बातों के साथ, शासकीय प्रयोजनों के लिए हिंदी के प्रसार, विधि के क्षेत्र में हिंदी की स्थिति, सरकारी कार्य में हिंदी का मूल रूप से प्रयोग से संबंधित था । विभिन्न संघ मंत्रालयों/विभागों और राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों की सरकारों द्वारा प्रकट किए गए विचारों पर विचार करने के पश्चात् गृह मंत्रालय के राजभाषा विभाग ने क्रम सं. 16.8(घ) और 16.8(ङ) पर उक्त समिति की रिपोर्ट में की गई

सिफारिशों पर राजभाषा अधिनियम, 1963 की धारा 4(4) के अधीन किए गए राष्ट्रपति के आदेशों को तारीख 13.7.05 के उक्त संकल्प के अधीन निम्नलिखित रूप में प्रेषित किया :-

> "16.8(घ) संविधान के अनुच्छेद 348 का संशोधन किया जा सकता है, जिससे विधायी विभाग को हिंदी में मूल रूप से प्रारूपण करने का कार्य हाथ में लेने के लिए समर्थ बनाया जा सके ।
>
> 16.8(ङ) संविधान के अनुच्छेद 348 के संशोधन के पश्चात् उच्च न्यायालयों/उच्चतम न्यायालय से अपने निर्णय और डिक्रियों आदि को हिंदी में देना प्रारंभ करने के लिए कहा जाना चाहिए जिससे कि बड़ी संख्या में सरकारी विभाग, जो न्यायिक/अर्ध न्यायिक कृत्य कर रहे हैं, हिंदी में आदेश देने में समर्थ हो सके । इस समय, ये विभाग हिंदी में आदेश पारित करने में असमर्थ है क्योंकि उच्च न्यायालयों/उच्चतम न्यायालय में उनके आदेश के विरुद्ध अपील अंग्रेजी में संचालित की जानी होती है ।"

समिति की उक्त सिफारिशों पर, राष्ट्रपति द्वारा राजभाषा अधिनियम, 1963 की धारा 4(4) के अधीन निम्नलिखित रूप में आदेश जारी किए गए थे :-

> "ये सिफारिशें विधायी विभाग को इस निदेश के साथ निर्दिष्ट की जा सकती हैं कि इन पर भारत के विधि आयोग के विचार प्राप्त किए जाएं और तत्पश्चात् इन सिफारिशों पर उनकी सुविचारित राय सूचित की जाए । अंतिम विनिश्चय तदनुसार किया जाएगा ।"

उक्त की दृष्टि से इस मामले को भारत के विधि आयोग के समक्ष उसकी राय और समुचित सिफारिश के लिए रखा गया था ।

अध्याय - II

भारत के संविधान के सुसंगत उपबंध

यह आवश्यक है कि भारत के संविधान के सुसंगत उपबंधों को नीचे उद्धृत किया जाए :-

अध्याय : 3 - उच्चतम न्यायालय, उच्च न्यायालयों, आदि की भाषा ।

अनुच्छेद 348 - उच्चतम न्यालय और उच्च न्यायालयों में और अधिनियमों, विधेयकों आदि के लिए प्रयोग की जाने वाली भाषा -

(1) इस भाग के पूर्वगामी उपबंधों में किसी बात के होते हुए भी, जब तक संसद विधि द्वारा अन्यथा उपबंध न करे तब तक --

(क) उच्चतम न्यायालय और प्रत्येक उच्च न्यायालय में सभी कार्यवाहियां अंग्रेजी भाषा में होंगी,

(ख) (i) संसद के प्रत्येक सदन या किसी राज्य के विधान-मंडल के सदन या प्रत्येक सदन में पुरःस्थापित किए जाने वाले सभी विधेयकों या प्रस्तावित किए जाने वाले उनके संशोधनों के,

(ii) संसद या किसी राज्य के विधान मंडल द्वारा पारित सभी अधिनियमों के और राष्ट्रपति या किसी राज्य के राज्यपाल द्वारा प्रख्यापित सभी अध्यादेशों के, और

(iii) इस संविधान के अधीन अथवा संसद या किसी राज्य के विधान-मंडल द्वारा बनाई गई किसी विधि के अधीन निकाले गए या बनाए गए सभी आदेशों, नियमों विनियमों और उपविधियों के,

प्राधिकृत पाठ अंग्रेजी भाषा में होंगे ।

(2) खंड (1) के उपखंड (क) में किसी बात के होते हुए भी, किसी राज्य का राज्यपाल राष्ट्रपति की पूर्व सहमति से उस उच्च न्यायालय की कार्यवाहियों में, जिसका मुख्य स्थान उस राज्य में है, हिंदी भाषा का या उस राज्य के शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग होने वाली किसी अन्य भाषा का प्रयोग प्राधिकृत कर सकेगा :

परंतु इस खंड की कोई बात ऐसे उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए किसी निर्णय, डिक्री या आदेश को लागू नहीं होगी ।

(3) खंड (1) के उपखंड (ख) में किसी बात के होते हुए भी, जहां किसी राज्य के विधान-मंडल ने, उस विधान-मंडल में पुरःस्थापित विधेयकों या उसके द्वारा पारित अधिनियमों में अथवा उस राज्य के राज्यपाल द्वारा प्रख्यापित अध्यादेशों में अथवा उस उपखंड के पैरा (iii) में निर्दिष्ट किसी आदेश, नियम, विनियम या उपविधि में प्रयोग के लिए अंग्रेजी भाषा से भिन्न कोई भाषा विहित की है वहां उस राज्य के राजपत्र में उस राज्य के राज्यपाल के प्राधिकार से प्रकाशित अंग्रेजी भाषा में उसका अनुवाद इस अनुच्छेद के अधीन उसका अंग्रेजी भाषा में प्राधिकृत पाठ समझा जाएगा ।

अनुच्छेद 349-भाषा से संबंधित कुछ विधियां अधिनियमित करने के लिए विशेष प्रक्रिया -

इस संविधान के प्रारंभ से पंद्रह वर्ष की अवधि के दौरान, अनुच्छेद 348 के खंड (1) में उल्लिखित किसी प्रयोजन के लिए प्रयोग की जाने वाली भाषा के लिए उपबंध करने वाला कोई विधेयक या संशोधन संसद के किसी सदन में राष्ट्रपति की पूर्व मंजूरी के बिना पुरःस्थापित या प्रस्तावित नहीं किया जाएगा और राष्ट्रपति किसी ऐसे विधेयक को पुरःस्थापित या किसी ऐसे संशोधन को प्रस्तावित किए जाने की मंजूरी अनुच्छेद 344 के खंड (1) के अधीन गठित आयोग की सिफारिशों पर और उस अनुच्छेद के खंड (4) के अधीन गठित समिति के प्रतिवेदन पर विचार करने के पश्चात् ही देगा, अन्यथा नहीं ।

अध्याय - III

भारत के संविधान के अनुच्छेद 348 का संशोधन करने के लिए प्रस्ताव पर न्यायाधीशों, वरिष्ठ अधिवक्ताओं, उच्च न्यायालय अधिवक्ता संगमों के विचार

विधि आयोग के अध्यक्ष ने भारत के उच्चतम न्यायालय के कुछ सेवानिवृत्त मुख्य न्यायमूर्तियों और न्यायाधीशों, भारत के विभिन्न भागों से और विभिन्न राज्यों के विभिन्न विधि संगमों से वरिष्ठ अधिवक्ताओं को पत्र लिखे थे । संसदीय राजभाषा समिति की सिफारिशों के संबंध में पत्र के उत्तर में विधि आयोग को निम्नलिखित से लिखित उत्तर प्राप्त हुए हैं :-

न्यायाधीश

(1) माननीय श्री न्यायमूर्ति वाई. वी. चंद्रचूड़, भारत के भूतपूर्व मुख्य न्यायमूर्ति

(2) माननीय श्री न्यायमूर्ति एस. नटराजन

(3) माननीय श्री न्यायमूर्ति के. टी. थॉमस

(4) माननीय श्री न्यायमूर्ति वी. आर. कृष्ण अय्यर

(5) माननीय श्री न्यायमूर्ति बी. एन. श्रीकृष्ण

(6) माननीय श्री न्यायमूर्ति एम. एन. वेंकटचलैय्या

(7) माननीय श्री न्यायमूर्ति के. जगन्नाथ शेट्टी

(8) माननीय श्री न्यायमूर्ति बी. पी. जीवन रेड्डी

(9) माननीय श्री न्यायमूर्ति ए. एम. अहमदी

(10) माननीय श्री न्यायमूर्ति एन. संतोष हेगडे

(11) माननीय श्री न्यायमूर्ति एसएसएम क्वाद्री

(12) माननीय श्री न्यायमूर्ति के. एस. परीपुर्णन

(13) डा. न्यायमूर्ति वी. एस. मालिमथ

वरिष्ठ अधिवक्ता

(1) श्री पी. पी. राव

(2) श्री टी. एल. विश्वनाथ अय्यर

(3) श्री विजय हंसारिया

(4) श्री के. के. वेणुगोपाल

(5) श्री अरविंद दातार

(6) श्री सी. लक्ष्मी नरायणन

(7) डा. आर. जी. पाडिया

(8) श्री टी. पी. केलू नम्बियार

उच्च न्यायालय अधिवक्ता संगम

(1) आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय अधिवक्ता' संगम

(2) केरल उच्च न्यायालय अधिवक्ता' संगम

(3) तमिलनाडु और पुडुचेररी, विधिज्ञ परिषद्

अध्यक्ष, भारतीय विधिज्ञ संगम

श्री फाली एस. नारिमन - भारतीय विधिज्ञ संगम

माननीय श्री न्यायमूर्ति वाई. वी. चंद्रचूड़, भारत के भूतपूर्व मुख्य न्यायमूर्ति

"मुझे आपका 8 अक्तूबर, 2007 का पत्र प्राप्त हुआ है, जिसमें मुझसे संसदीय राजभाषा समिति द्वारा की गई सिफारिशों पर मेरे विचार प्रस्तुत करने के लिए कहा गया है ।

मैं 16.8(घ) और 16.8(ङ) में प्रस्तावित संशोधन का बहुत अधिक विरोधी हूं । मेरी दृढ़ राय है कि हिंदी में मूल रूप से प्रारुपण करने का कार्य हाथ में लेने के लिए विधायी विभाग को समर्थ बनाने हेतु संविधान का संशोधन नहीं किया जाना चाहिए । मैं सिफारिश 16.8(ङ) का भी और अधिक विरोधी हूं । न तो उच्चतम न्यायालय से और न उच्च

न्यायालयों से हिंदी में अपने निर्णय देने के लिए कहा जाना चाहिए । इन न्यायालयों के न्यायाधीश संपूर्ण भारत से लिए जाते हैं और वे हिंदी से सुपरिचित नहीं होते हैं । अंग्रेजी भाषा अब संसार की भाषा के रूप में महत्व अर्जित कर रही है । हमें नई पीढ़ी को अंग्रेजी भाषा के लाभ से वंचित नहीं करना चाहिए ।"

<u>माननीय श्री न्यायमूर्ति एस. नटराजन</u>

"मुझे आपका तारीख 8 अक्तूबर, 2007 का पत्र प्राप्त हुआ है जो हिंदी में विधायी विभाग द्वारा मूल रूप से प्रारुपण किए जाने और हिंदी में आदेश देने के लिए न्यायिक/अर्ध न्यायिक कृत्यों को करने वाले प्राधिकारियों के लाभ के लिए उच्चतम न्यायालय तथा उच्च न्यायालयों द्वारा निर्णयों और डिक्रियों आदि को हिंदी में दिए जाने के संबंध में भारत के विधि आयोग को अपने विचार/राय देने और समुचित सिफारिश करने के लिए किए गए निर्देश के बारे में है ।

कोई व्यक्ति हिंदी के अग्रणी नेताओं की इस इच्छा को अच्छी तरह समझ सकता है कि अंग्रेजी को हिंदी द्वारा पूर्ण रूप से इस आधार पर प्रतिस्थापित किया जाए कि हिंदी देश में बहुसंख्यक जनता द्वारा बोली जाती है । तथापि इस इच्छा के कितना भी वास्तविक और प्रशंसनीय होने पर भी मेरी व्यक्तिगत रूप से यह राय है और मैं निश्चित हूं कि भारत की जनसंख्या की बहुत बड़ी संख्या विशेष रूप से दक्षिण और पूर्वी भागों वाले व्यक्ति, हिंदी में अधिनियमों का मूल रूप से प्रारुपण किए जाने और इसी प्रकार उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों द्वारा हिंदी में निर्णय दिए जाने के पक्ष में नहीं होंगे । उच्च न्यायालयों और उच्चतम न्यायालय के बहुत से न्यायाधीश और साथ ही बहुत से वकील हिंदी भाषा नहीं जानते हैं और उन्हें अधिनियमों और निर्णयों को जानने के लिए अंग्रेजी में उनके अनुवादों पर निर्भर रहना होगा ।

अंग्रेजी भाषा ने देश में न केवल एक अपरिहार्य और अद्वितीय स्थान ग्रहण कर

लिया है बल्कि वह विश्व भाषा भी हो गई है । भारत के उच्चतम न्यायालय तथा उच्च न्यायालयों के निर्णय अन्य देशों के उच्च न्यायालयों और उच्चतम न्यायालय के समक्ष पढ़े जाते हैं और कभी-कभी उद्धृत भी किए जाते हैं । ऐसी स्थिति होने पर, यदि उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों को हिंदी में निर्णय देना होगा तो दक्षिण और पूर्वी क्षेत्रों की जनता, जिसके अंतर्गत बार और न्यायपालिका के विद्वान् सदस्य भी हैं, उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों द्वारा हिंदी में दिए गए निर्णयों को, उन निर्णयों के अंग्रेजी में उनके अनुवादों के माध्यम से उन्हें जानने के सिवाय, जानने में समर्थ नहीं होंगे ।

इससे अधिक देश की एकता और एकीकरण पर भी भाषाई अंधभक्तों के कारण अवश्य प्रभाव पड़ेगा ।

अतः मेरी सुविचारित राय में, विधि आयोग को सिफारिश 16.8(घ) और 16.8(ङ) में उपवर्णित रूप में संविधान के अनुच्छेद 348 के प्रस्तावित संशोधन के लिए संसदीय समिति की सिफ़ारिश को स्वीकृति नहीं देनी चाहिए ।"

•

मानननीय श्री न्यायमूर्ति के. टी. थॉमस

"तारीख 8.10.07 के पत्र के लिए आपको धन्यवाद । संसदीय राजभाषा समिति की सिफारिशें, जैसा आपके पत्र में उद्धृत की गई हैं, उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों में भाषा के परिवर्तन के लिए सुझाव देती हैं ।

संविधान का अनुच्छेद 348 आदेश करता है कि उच्चतम न्यायालय में और प्रत्येक उच्च न्यायालय में सभी कार्यवाहियां अंग्रेजी भाषा में तब तक होंगी जब तक संसद विधि द्वारा अन्यथा उपबंध नहीं करती हैं । प्रश्न यह है कि क्या संसद को उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों के लिए एक भिन्न भाषा का, जब अंग्रेजी पिछले 57 वर्षों से अपनाई जा रही है, उपबंध करना चाहिए । यह भारतीय न्यायिक पद्धति द्वारा प्राप्त किया गया ऐतिहासिक लाभ है कि वह ऐसी भाषा का प्रयोग कर रही है जो कि अब लगभग न्यायिक

संसार की भाषा है । इसके अतिरिक्त जब कंप्यूटरों ने प्रेषण के माध्यम के रूप में अंग्रेजी को अपना लिया है तब हमें उस भाषा के लाभ से अपने आपको अलग नहीं करना चाहिए । अंग्रेजी भाषा अब केवल इंग्लैंड के छोटे से देश मात्र की मातृ भाषा नहीं रह गई है ।

यदि उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों को हिंदी के लिए परिवर्तन करना है तो ऐसा परिवर्तन भारतीय न्यायपालिका के लिए क्या लाभ लाएगा ? मुझे कोई भी लाभ दिखाई नहीं देता है । दूसरी तरफ ऐसी बहुत सी हानियां, जो यह ला सकता है, न्यायिक पद्धति को अपंग तक कर सकती हैं क्योंकि 90 प्रतिशत अधिवक्ता जो दक्षिण राज्यों के उच्च न्यायालय के हैं कोई भी विधिक कार्य हिंदी में नहीं कर सकते हैं । दक्षिण राज्यों में उच्च न्यायालयों के बहुत से राज्यों में एक भी आशुलिपिक उपलब्ध नहीं है जो हिंदी में आशुलेखन कर सके और आशुलेखन को पांडुलिपि में परिवर्तित कर सके ।

विभिन्न उच्च न्यायालयों में मिलने वाली सभी विधि पुस्तकें, जिनके अंतर्गत सभी विधि पत्रिकाएं भी हैं, अंग्रेजी भाषा में है और उन सभी पुस्तकों का अनुवाद करने में करोड़ों रुपए लगेंगे । जब हमारे पास गरीब जनता की अत्यावश्यकताएं पूरी करने के लिए पर्याप्त धन नहीं है तब केवल कुछ उद्धत भाषाविदों को संतुष्ट करने के लिए बहुत बड़ी राशि की व्यय करना लोक धन का अपव्यय होगा ।

इससे पृथक भारत के उच्च न्यायालयों और उच्चतम न्यायालय में अंग्रेजी से हिंदी के लिए परिवर्तन करना संपूर्ण देश में राजनीतिक और विधिक अशांति को, जिससे बचा जा सकता है, जन्म देगा ।

<u>माननीय श्री न्यायमूर्ति बी. आर. कृष्णा अय्यर</u>

केंद्रीय विधि आयोग द्वारा उठाया गया मुद्दा ऐसी गंभीर उलझनों से परिपूर्ण हैं, जो भारत की ऐसी जनता की, जो भिन्न राज्यों और क्षेत्रों में सोलह या अधिक भिन्न भाषाओं का उपयोग करती है, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की भाषागत, अर्थगत और संघीय बिमाओं

और न्याय के अधिकार पर प्रभाव डालता है । हिंदी बहुत से राज्यों में बोली या समझी नहीं जाती है और उसी प्रकार अंग्रेजी भी । यदि संसदीय विधेयक और उच्चतर न्यायालयों के विनिर्णय मूल रूप से हिंदी में लिखे जाते हैं तो भारतीयों का एक बहुत बड़ा वर्ग हिंदी में मूल रूप से लिखे गए को सीधे समझने की सुविधा से, यदि प्रस्तावित सुझाव को स्वीकार कर लिया जाता है तो, वंचित हो जाएगा । शायद यह एक कारण था कि जिससे एक महान देशभक्त और पहले भारतीय गवर्नर जनरल श्री सी. राजगोपालाचारी ने हिंदी को जनता पर थोपे जाने का विरोध किया । उन्होंने गुस्से में मांग की "हिंदी कभी नहीं अंग्रेजी हमेशा" । तमिलनाडु उच्चतम न्यायालय के या मद्रास उच्च न्यायालय के निर्णयों को कभी हिंदी में स्वीकार नहीं करेगा । हिंदी की अंधभक्ति की कोई राष्ट्रीय उपयोगिता नहीं है । अंग्रेजी और हिंदी, साथ भी, लाखों भारतीयों की विधायी समादेश द्वारा भी सहायता नहीं कर सकती । यहां तक कि बहुत से न्यायालयों में, जिनके अंतर्गत उच्चतम न्यायालय भी है, बहुत से न्यायाधीश हिंदी नहीं जानते हैं और इसलिए वे निर्णयों को, यदि उन्हें हिंदी में दिया जाता है तो, पढ़ या समझ नहीं सकते हैं । मैं हिंदी के लिए अभिवाक् के पीछे राष्ट्रीय भावना को अनुभव करता हूं किंतु मैं अपने बहुभाषी देश में भूमिगत वास्तविकता से मुंह नहीं मोड़ सकता । वर्तमान पद्धति का अंतरराष्ट्रीय तात्पर्य भी है और हमारे न्यायाधीशों को अन्य देशों के उच्चतम न्यायालयों में अंग्रेजी में लिखे गए निर्णयों पर भरोसा करना पड़ता है । मैं व्यक्तिगत अधिमान के रूप में पूर्ण रूप से हिंदी का समर्थन करता हूं किंतु मैं विवशता द्वारा हिंदी का पूर्ण रूप से विरोधी हूं, विशेष रूप से भारत के उच्चतम न्यायालय के निर्णयों में । मेरे पास वर्तमान पद्धति के समर्थन में व्यावहारिक दृष्टि से बहुत से और कारण हैं जिन्हें मैं यहां विस्तार से नहीं बता सकता । तथापि जब महान लेनिन सोवियत यूनियन में सत्ता आया तब उसने यू.एस.एस.आर. के अन्य राज्यों में रुसीकरण के विरूद्ध चेतावनी दी थी जिससे साम्राज्यवाद की गंध आती । बुद्धिमानी रूढ़िवाद से भिन्न है । हमें हिंदी को राष्ट्रीय अभिव्यक्ति में उच्च स्थान देना चाहिए और प्रत्येक ऐसे प्रतिवेदन के, जो जनता उच्चतर न्यायालयों में निःशुल्क विधिक सहायता के एकीकृत भाग के रूप में करना

चाहती है, तुरंत अनुवाद के लिए पूर्ण सुविधा देनी चाहिए । तीन भाषा वाले सूत्र पर, जिसकी कुछ शासकीय प्रास्थिति है, कार्यान्वयन के लिए विचार किया जा सकता है, चाहे इसमें कोई भी लागत अंतर्वलित हो । भाषा के लिए लड़ाई की भावना विरोधी बनाएगी और विभाजन करेगी किंतु संघीय बहुलवाद प्रजातांत्रिक संवेदना है ।

मानननीय श्री न्यायमूर्ति बी. एन. श्रीकृष्ण

"मुझे दुख है कि आपका 8 अक्तूबर, 2007 का पत्र अभी तक अनुत्तरित रहा । यह इस कारण से हुआ कि मैं मुंबई से लगातार दूर यात्रा कर रहा था । कृपया मुझे इस गलती के लिए क्षमा करें ।

मैंने आपके पत्र में उठाए गए मुद्दे पर विचार किया है । मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि जब तक वकीलों की दो पीढ़ियों को हिंदी में विधिक संव्यवहार करने के लिए प्रशिक्षित नहीं किया जाता है तब तक उच्च न्यायालयों और उच्चतम न्यायालय की भाषा को अंग्रेजी से हिंदी में बदलना आत्मघाती होगा । इसके अतिरिक्त उच्चतम न्यायालय में भिन्न न्यायालयों से ऐसे न्यायाधीश होने के कारण, जो हिंदी से बिल्कुल भी अवगत नहीं हो सकते हैं, यह उनके लिए लगभग असंभव होगा कि वे हिंदी में कार्यवाहियों का संचालन करें या निर्णयों को लिखें ।

मेरी सुविचारित राय में उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों से हिंदी में निर्णय देने की अपेक्षा करने वाले प्रस्ताव का परिणाम अव्यवस्था में होगा और इससे न्याय के प्रशासन पर प्रतिकूल रूप से प्रभाव पड़ेगा ।

माननीय श्री न्यायमूर्ति एम.एन. वेंकटचलैय्या

"प्रारंभ में, मैं आपके पूर्व पत्र का उत्तर न देने के लिए क्षमा मांगता हूं । अक्तूबर के दौरान मैं अस्पताल आता-जाता रहा था और मैंने पत्र नहीं देखा । यदि आप ने एक बार फोन किया होता तो मैं सावधान हो जाता । कृपया मेरी असावधानी के लिए मुझे क्षमा करें ।

इस मुद्दे के गुणागुण पर यह अभिस्वीकार किया जाना चाहिए कि हिंदी को हमारी राष्ट्रभाषा के रूप में हमारे राष्ट्रीय जीवन के सभी क्षेत्रों में उसके सही स्थान के लिए अवश्य दावा करना चाहिए और उच्चतर न्यायपालिका भी इसका अपवाद नहीं होनी चाहिए । संसदीय राजभाषा समिति ने इस विषय के महत्व पर सही रूप से जोर दिया है ।

इस सिद्धांत के व्यावहारिक कार्यान्वयन में कुछ मुद्दे हो सकते हैं जो इन परिस्थितियों से उत्पन्न हो कि सामान्य विधि की बपौती, जो हमें विरासत में मिली है, लोक विधि की पद्धति, अंतरराष्ट्रीय मानवाधिकार प्रणाली, अंतरराष्ट्रीय बौद्धिक संपदा प्रणाली और बढ़ने वाली एकीकरण आर्थिक विधियां तथा सीमा पार के संव्यवहार दूसरे देशों और अधिकारिताओं की विधिक प्रणालियों के साथ एकीकरण को अधिरोपित करते हैं । यह सब वरिष्ठ न्यायालयों में भाषा की नीति को प्रभावित कर सकता है ।

तथापि हमें संसदीय विचारों का आदर करना चाहिए और एक प्रारंभ सावधानीपूर्वक करना चाहिए जो इसे धीरे-धीरे शीघ्र किए जाने की अपेक्षा करता है ।

यह मेरे केवल प्रारंभिक विचार हैं, गंभीर सोच का परिणाम नहीं हैं । मुझे आपको कोई और या पुनरीक्षित राय, जो सम्यक और आगे विचार करने के पश्चात् बनाई गई हो, भेजने में प्रसन्नता होगी ।''

माननीय श्री न्यायमूर्ति के. जगनाथ शेट्ठी

''मुझे आपका तारीख 8 अक्तूबर, 2007 का और 30 नवंबर, 2007 का भी पत्र प्राप्त हुआ है ।

मेरे बाहर यात्रा पर होने के कारण, मैं तुरंत उनका उत्तर नहीं दे सका ।

मुझे प्रसन्नता है कि आप अब विधि आयोग के, जिसका कुछ समय से महत्व कम हो गया है, अध्यक्ष हैं । मैं आशा करता हूं कि आप इसको अधिक प्रभावी और महत्वपूर्ण बनाएंगे ।

मैंने संसदीय राजभाषा समिति की सिफारिशों को ध्यानपूर्वक देखा है ।

मैं उक्त समिति द्वारा की गई सिफारिशों के पूर्णतया विरुद्ध हूं ।

उच्च न्यायालयों और उच्चतम न्यायालय से अपने निर्णयों और डिक्रियों को हिंदी में देना प्रारंभ करने के लिए नहीं कहा जा सकता है । यह एक बहुत ही विवादास्पद मुद्दा है जिसके दूरगामी परिणाम हो सकते हैं ।

हिंदी को अधिरोपित किए जाने के संबंध में दक्षिण राज्यों के विचार सुविदित हैं । राज्य प्रशासन साधारणतया अपनी-अपनी प्रादेशिक भाषाओं में आदेश पारित करते हैं और उच्च न्यायालय विशिष्टतः और अधीनस्थ न्यायालय साधारणतया अंग्रेजी में निर्णय दे रहे हैं ।

आज अंग्रेजी को विदेशी भाषा के रूप में नहीं माना जा सकता है । यह राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय संचार के लिए अधिक महत्वपूर्ण है ।

चूंकि उच्चतम न्यायालय में देश के विभिन्न भागों से लाए गए न्यायाधीश होते हैं, अतः उच्चतम न्यायालय पर हिंदी अधिरोपित करना असंभव है ।

इसलिए यह आवश्यक है कि उच्च न्यायालयों और उच्चतम न्यायालय की भाषा एकरूप होनी चाहिए और यह आने वाले सभी समय के लिए केवल अंग्रेजी होनी चाहिए ।''

माननीय श्री न्यायमूर्ति बी. पी. जीवन रेड्डी

''तारीख 8 अक्तूबर, 2007 के आपके पत्र के लिए धन्यवाद ।

मेरी इस विषय पर, जो भारत सरकार द्वारा विधि आयोग को निर्दिष्ट किया गया है, कोई राय नहीं है । जहां तक मेरा संबंध है, यह सर्वोत्तम होगा कि इस विषय को कार्यपालिका के लिए छोड़ दिया जाए ।''

माननीय श्री न्यायमूर्ति ए. एम. अहमदी

"कृपया इसके साथ एक टिप्पण प्राप्त करें जिसमें पैरा 16.8(घ) और 16.8(ङ) पर संसदीय राजभाषा समिति की सिफारिशों के संबंध में मेरे विचार अंतर्विष्ट है । मैं आशा करता हूं कि वे आपको लाभप्रद लगेंगे ।

मुझे आपको उत्तर देने में हुए विलंब के लिए दुख है ।

उच्च न्यायालयों/उच्चतम न्यायालय से हिंदी में निर्णयों/डिक्रियों आदि को देने के लिए कहने के संबंध में संसदीय समिति की सिफारिशों पर टिप्पण

इसमें विधि आयोग के उस पत्र के प्रति निर्देश है जिसमें क्रम सं. 16.8(घ) और 16.8(ङ) पर संसदीय राजभाषा समिति की सिफारिशों के संबंध में मेरे विचार चाहे गए हैं । मैं समझता हूं कि इस समिति को संविधान के अनुच्छेद 348(4) के अधीन गठित किया गया होगा ।

संविधान का अनुच्छेद 348 आदेश करता है कि संघ की राजभाषा देवनागरी लिपि में हिंदी होगी । इस बात के होते हुए भी, उसके खंड (2) और खंड (3) उसमें विनिर्दिष्ट बढ़ाई गई कालावधियों के लिए अंग्रेजी भाषा के प्रयोग की अनुज्ञा देते हैं ।

संविधान का अनुच्छेद 348 निम्नलिखित रूप में है :-

"इस भाग के पूर्वगामी उपबंधों में किसी बात के होते हुए भी इस भाग के (जिससे अभिप्रेत है भाग XVII) जब तक संसद विधि द्वारा अन्यथा उपबंध न करे तब तक -

(क) उच्चतम न्यायालय और प्रत्येक उच्च न्यायालय में सभी कार्यवाहियां अंग्रेजी भाषा में होगी ।

(ख) सभी प्राधिकृत पाठ -

(i) ....

(ii) ....

(iii) ....

अंग्रेजी भाषा में होंगे ।''

अतः यह स्पष्ट है कि अनुच्छेद 348(1) अनुच्छेद 343 को अतिष्ठित करता है । अनुच्छेद 348 (1) का खंड (क) यह बताता है कि उच्चतम न्यायालय में प्रयोग की जाने वाली भाषा अंग्रेजी होगी जब तक कि संसद विधि द्वारा अन्यथा उपबंध नहीं करती है । अतः अभिवचन और मौखिक निवेदन तक भी अंग्रेजी में होंगे (**मधुलिमाए** बनाम **वेद मूर्ति** ए. आई. आर. 1971 एस.सी. 2608) ।

जहां तक उच्च न्यायालयों का संबंध है भाषा तब तक अंग्रेजी होगी जब तक कि संसद विधि द्वारा अन्यथा उपबंध नहीं करती है । तथापि अनुच्छेद 348(2), जो कि सर्वोपरि खंड के साथ प्रारंभ होता है, किसी राज्य के राज्यपाल को राष्ट्रपति की पूर्व सहमति से उस उच्च न्यायालय की कार्यवाहियों में, जिसका मुख्य स्थान उस राज्य में है, हिंदी भाषा का या उस राज्य के शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग होने वाली किसी अन्य भाषा का प्रयोग प्राधिकृत करने के लिए सशक्त करता है । तथापि परंतुक यह स्पष्ट करता है कि उक्त खंड की कोई भी बात ऐसे उच्च न्यायालय द्वारा पारित किए गए या किए गए किसी निर्णय, डिक्री या आदेश को लागू नहीं होगी । अतः यह स्पष्ट है कि हिंदी का प्रयोग प्राधिकृत करने के लिए अनुच्छेद 348 के खंड (2) द्वारा प्रदत्त शक्ति केवल अभिवचनों, दस्तावेजों और शायद मौखिक बहस तक सीमित है ।

क्रम सं. 16.8(ङ) पर सिफारिश संविधान का संशोधन करने के बारे में कहती है । अनुच्छेद 348(1) यह स्पष्ट करता है कि उच्चतम न्यायालय में और प्रत्येक उच्च न्यायालय

में सभी कार्यवाहियों और साथ ही क्रम संख्या (i), (ii) और (iii) पर परिगणित प्राधिकृत पाठ के संबंध में, जब तक संसद विधि द्वारा अन्यथा उपबंध नहीं करती है, भाषा अंग्रेजी होगी । अतः यह स्पष्ट है कि जो अपेक्षित है वह अंग्रेजी से हिंदी भाषा में परिवर्तन करने के लिए संसदीय विधान है, न कि संविधान का कोई संशोधन । अतः यह पूरी तरह समझना कठिन है कि क्रम संख्या 16.8(घ) पर की सिफारिश संविधान के संशोधन के बारे में क्यों कहती है जब तक कि भावना यह न हो कि अनुच्छेद 348 के खंड (2) के परंतुक का उसमें निगमित परिसीमा हटाने की दृष्टि से संशोधन किया जाए ।

क्रम सं. 16.8(घ) पर सिफारिश कथन करती है कि उच्च न्यायालयों/उच्चतम न्यायालय से अपने निर्णयों और डिक्रियों आदि को हिंदी में देना प्रारंभ करने के लिए कहा जाना चाहिए जिससे कि बड़ी संख्या में सरकारी विभाग, जो न्यायिक/अर्ध न्यायिक कृत्यों को कर रहे हैं, हिंदी में आदेश देने में समर्थ हो सकें । उच्च न्यायालयों/उच्चतम न्यायालय से हिंदी में निर्णय देने के लिए कहने का मूलाधार विश्वसनीय प्रतीत नहीं होता है । यह कहना कि ये विभाग हिंदी में आदेश पारित करने में असमर्थ हैं क्योंकि उच्च न्यायालयों/उच्चतम न्यायालय में उनके आदेशों के विरुद्ध फाइल की गई अपील को अंग्रेजी में संचालित किया जाना होता है, पूर्ण जानकारी की मांग को धोखा देता है । प्रथमतः अपीलें साधारणतया ऐसे कार्यपालिका के आदेशों से सीधे उच्चतम न्यायालय में नहीं आती हैं सिवाय कानूनी अपीलों के जो बहुत कम हैं । ऐसे आदेशों को कभी-कभी, यद्यपि विरले ही संविधान के अनुच्छेद 32 के अधीन प्रश्नगत किया जाता है । जहां तक उच्च न्यायालयों का संबंध है, ऐसे आदेशों को उनके समक्ष प्रश्नगत किया जा सकता है यदि कानून अपील के लिए या अन्यथा संविधान के अनुच्छेद 226/227 के अधीन उपबंध करता है । उच्च न्यायालय पहले से ही आपराधिक मामलों में जहां दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 272 के अधीन, निर्णय संबंधित राज्य सरकारों द्वारा अवधारित रूप में प्रादेशिक भाषाओं में अनुज्ञात है और लिखे जाते हैं, निचले न्यायालयों के निर्णयों से अपीलों की

सुनवाई कर रहे हैं । यह भी सामान्य ज्ञान है कि साक्ष्य विचारण न्यायालयों में प्रादेशिक भाषाओं में अभिलिखित किए जाते हैं अतः यदि आदेश सरकार के विभिन्न विभागों में अधिकारियों द्वारा हिंदी में लिखे जाते हैं तो वहां ऐसी कोई आशंकित समस्या नहीं होगी । इसलिए उच्च न्यायालयों/उच्चतम न्यायालय के लिए भाषा में परिवर्तन के लिए सामने रखा गया मूलाधार कदाचित जानकारी की कमी पर आधारित है और विश्वसनीयता से परे हैं ।

वर्षों से प्रत्येक राज्य सरकार द्वारा विद्यालयों/महाविद्यालयों में शिक्षण के माध्यम के रूप में, अंग्रेजी के साथ या उसके बिना प्रादेशिक भाषा का उपयोग करने के लिए जोर दिए जाने के कारण, केवल वे ही हिंदी में कुशल हैं जो हिंदी भाषी क्षेत्र से आते हैं और दूसरे नहीं । अनुच्छेद 351 द्वारा सौंपा गया कर्तव्य अपूर्ण रह गया है । परिणाम यह है कि बड़ी संख्या में विधि व्यवसायी, जो हिंदी भाषी क्षेत्र से हैं, हिंदी में अपने ब्रीफ लिखने में या उन पर बहस करने में समर्थ नहीं होंगे और न वे हिंदी में लिखे गए निर्णयों का आधार समझने में समर्थ होंगे, यह उप धारणा करते हुए भी कि न्यायाधीश ऐसा करने के लिए सुसज्जित है । इसके अलावा स्थानांतरण नीति के परिणामस्वरूप प्रत्येक उच्च न्यायालय में दूसरे राज्यों के न्यायाधीश होते हैं और उन्हें ऐसे मामले नहीं सौंपे जा सकते हैं जिनका रिकार्ड प्रादेशिक भाषा में होता है । चूंकि ऐसे न्यायाधीशों का अनुपात इस समय कम है, अतः मुख्य न्यायमूर्ति व्यवस्था करने में समर्थ हैं यद्यपि कुछ कठिनाई के साथ । किंतु यदि हिंदी को चारो तरफ लागू किया जाता है तो ऐसे न्यायाधीशों की संख्या बहुत अधिक हो जाएगी (क्योंकि प्रादेशिक भाषा जानने वाले न्यायाधीश भी हिंदी के साथ सुपरिचित नहीं होंगे) जिससे मुख्य न्यायमूर्तियों के लिए ऐसे न्यायाधीशों को मामलों को सौंपना कठिन हो जाएगा : जिससे कि अभिलेखों का अंग्रेजी में अनुवाद करने की मंहगी प्रक्रिया को प्रारंभ करना आवश्यक होगा । इससे अर्हित अनुवादकों की भी मांग होगी, जिनको पाना आसान नहीं होगा । इससे अतिरिक्त अनुवाद समाधानप्रद रूप में होने से दूर होते हैं और वास्तविक अर्थभेद/मर्म को प्रकट नहीं कर पाते हैं ।

अतः मेरे विचार में जब तक हिंदी का पूरे देश में प्रसार नहीं हो जाता है और शिक्षा

को उस भाषा में नहीं दिया जाता है, यह उचित नहीं हो सकता कि उच्च न्यायालयों/उच्चतम न्यायालय से हिंदी में कार्य प्रारंभ करने के लिए कहा जाए । प्रादेशिक भाषा को प्रतिस्थापित करना सरल नहीं हो सकता क्योंकि व्यावहारिक रूप से प्रत्येक राज्य ने उसे संविधान के अनुच्छेद 345 के अधीन ग्रहण कर लिया है । उच्चतम न्यायालय में न्यायाधीश विभिन्न राज्यों से आते हैं और उनमें से कुछ हिंदी में बोलने, समझने और लिखने में समर्थ नहीं होंगे । अतः मेरा विचार है कि उड़ान भरने के लिए आधार उपलब्ध नहीं है और इसलिए हिंदी को राज्य के उच्च न्यायालय में प्रारंभ करने का मामला संविधान के अनुच्छेद 348(2)के अधीन राज्य के राज्यपाल के निर्णय पर छोड़ देना बुद्धिमत्तापूर्ण होगा । वह इस बात का विनिश्चय करने में सर्वोत्तम न्यायाधीश होगा कि उस दिशा में कदम उठाने के लिए समय परिपक्व हो गया है ।''

माननीय श्री न्यायमूर्ति एन. संतोष हेगड़े

''मुझे आपके अनुरोध का पहले उत्तर न देने के लिए अत्यधिक दुख है कृपया मुझे उसके लिए क्षमा कर दें ।

मैंने क्रम सं. 16.8(घ) और क्रम सं. 16.8(ङ) पर की गई संसदीय राजभाषा समिति की सिफारिशों पर, जिसमें उन्होंने विधायी विभाग द्वारा अंगीकार की जाने वाली भाषा और साथ ही उच्च न्यायालयों और उच्चतम न्यायालय द्वारा अपना निर्णय देने के दौरान अपनाई जाने वाली भाषा के संबंध में संविधान के अनुच्छेद 348 का संशोधन करना चाहा है, ध्यानपूर्वक विचार किया है ।

मेरे पास क्रम सं. 16.8(घ) में प्रस्तावित संशोधन के संबंध में करने के लिए कोई टिप्पण नहीं है क्योंकि यह हिंदी में मूल रूप से प्रारुपण किए जाने के प्रति निर्देश करता है जिसका कि, मैं मानता हूं कि, अंग्रेजी में शासकीय रूप से अनुवाद किया जाएगा । तथापि मुझे पैरा 16.8(ङ) में अनुच्छेद 348 के प्रस्तावित संशोधन के बारे में बहुत कठोर आपत्तियां

हैं क्योंकि यह देश में सर्वत्र उच्च न्यायालयों और उच्चतम न्यायालय को हिंदी में निर्णय और डिक्रियां देने के लिए विवश करेगा । उसमें दिए गए कारण कि बड़ी संख्या में ऐसे सरकारी विभाग, जो न्यायिक / अर्ध न्यायिक कृत्य कर रहे हैं, वरिष्ठ न्यायालयों के निर्णयों के पारिणामिक आदेश हिंदी में प्रदान कर सकते हैं, भ्रमपूर्ण है । कुछ विभाग ऐसे कुछ राज्यों में हो सकते हैं, जिनमें राज्य की राजभाषा हिंदी है । किंतु यह ध्यान में रखना आवश्यक है कि इस देश में सभी राज्यों की अपनी राजभाषा हिंदी नहीं है और न हिंदी उनकी संचार की राजभाषा है । इस देश में जहां राज्य भाषा के आधार पर विभाजित हैं और प्रत्येक राज्य की अपनी राजभाषा है, वहां की गई सिफारिशें केवल इस देश में शांति को ही भंग करेंगी । प्रत्येक व्यक्ति जानता है कि, जैसा वर्तमान में है, राज्यों के बीच संघर्ष की कमी नहीं है और वह केवल भाषा के निर्देश से ही नहीं किंतु सीमाओं और पानी का हिस्सा बटाने के प्रति निर्देश से भी है । इस पृष्ठभूमि में मुझे इस बात की बड़ी आशंका है कि संसदीय राजभाषा समिति द्वारा की गई सिफारिश अंत में देश की पृथकता को निश्चित रूप से जन्म देगी । मैं भाषाई कट्टरपंथी नहीं हूं किंतु मेरी उपरोक्त आशंका वास्तविक भावना है जिसे मैंने वर्षों से अनुभव किया है कि कैसे प्रादेशिक प्रभाव संबंधित राज्यों की राजनीति और संस्कृति में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं । अतः यह कदम न तो राजनीतिक रूप से बुद्धिमतापूर्ण है और न संवैधानिक रूप से सही है । यह प्रस्ताव संविधान के निर्माताओं द्वारा विभिन्न राज्यों और समाज के विभिन्न वर्गों की भाषाई संस्कृति का संरक्षण करने के लिए दिए गए आश्वासन से वंचित कर देगा । अतः मैं कठोर रूप से इस कदम का विरोध करता हूं ।

इस संकटपूर्ण स्थिति में मैं आपके ध्यान में लाना चाहता हूं कि विभिन्न राज्यों ने यह मांग करनी प्रारंभ कर दी है कि न्यायपालिका को अपने-अपने उच्च न्यायालयों और अधीनस्थ न्यायालयों में प्रादेशिक भाषा का अनुसरण करना चाहिए और उसे अपनाना चाहिए । मैं ऐसे कदम उठाए जाने के भी विरुद्ध हूं जो मेरी राय में राज्य के उच्च

न्यायालयों को अन्य न्यायालयों से अलग कर देंगे और अंत में देश के सर्वोच्च न्यायालय में राज्यों के प्रतिनिधित्व पर गंभीर रूप से प्रभाव पड़ेगा ।

<u>माननीय श्री न्यायमूर्ति एसएसएम कादरी</u>

मैं 30 नवंबर, 2007 के आपके पत्र के लिए धन्यवाद करता हूं जिसके साथ पूर्व पत्र की एक प्रति संलग्न है और जिसमें संसदीय राजभाषा समिति की सिफारिशों पर, जो उसमें उद्धृत की गई है, मेरी राय मांगी गई है ।

मैंने ध्यानपूर्वक इन सिफारिशों को देखा है और उन पर बड़ी अभिरूचि के साथ विचार किया है । यद्यपि सिफारिशें प्रशंसनीय हैं और लंबे समय से चाही गई हैं किंतु मैं अनुभव करता हूं कि उन्हें प्रभावी बनाने से न केवल व्यावहारिक कठिनाइयां उत्पन्न होंगी किंतु वे भारत की स्थितियों को और अधिक अस्थिर बनाएंगी ।

जहां तक क्रम संख्या 16.8(घ) पर उक्त समिति की सिफारिशों का संबंध है भारत के संविधान के अनुच्छेद 348 का संशोधन करने में, जिससे कि विधायी विभाग को हिंदी में मूल रूप से प्रारुपण करने का कार्य आरंभ करने में समर्थ बनाया जा सके, निःसंदेह कोई समस्या नहीं हो सकती ।

तथापि क्रम संख्या 16.8(ङ) में अंतर्विष्ट सिफारिश, जो उच्च न्यायालयों/ उच्चतम न्यायालय से निर्णयों और डिक्रियों आदि को हिंदी में देना प्रारंभ करने की अपेक्षा के बारे में है, विभिन्न कठिनाइयों से - व्यावहारिक और साथ ही राजनीतिक, जिसमें ऐसे दुःसाध्य कार्य को करने की ऐसी कठिनाइयां होंगी, जिनका अनुमान लगाना कठिन नहीं है और जिसको पूरा करना आसान नहीं होगा, घिरी हुई है ।

पहले यह सामान्य ज्ञान की बात है कि विधायी अधिनियमितियां और नियम देश के सभी भागों में न्यायाधीशों, बार के सदस्यों और मुकदमा लड़ने वाली जनता के लिए हिंदी

में उपलब्ध नहीं हैं । दूसरे प्राधिकृत पाठ्य-पुस्तकें, समीक्षाएं और विधि पत्रिकाएं हिंदी में मुद्रित नहीं की जा रही हैं । तीसरे स्वतंत्रता पूर्व और पश्चात् की बहुत सी निर्णयज विधि अभी तक अंग्रेजी में है और उसका हिंदी में अनुवाद नहीं किया गया है । चौथे अपेक्षित संख्या में हिंदी आशुलिपिक उपलब्ध नहीं हैं । पांचवें दक्षिणी राज्य निर्णयों, डिक्रियों और आदेशों का हिंदी में दिया जाना स्वीकार करने के लिए पूर्णतया सुसज्जित नहीं हैं । छठे यह भी सामान्य ज्ञान है कि प्रादेशिक भाषाओं के आधार पर राज्यों के पुनर्गठन के पश्चात् कतिपय दक्षिण राज्यों ने गैर हिंदी भाषी राज्यों पर हिंदी के राष्ट्र भाषा के रूप में कार्यान्वित किए जाने के बारे में गहरी प्रतिक्रिया की है और यह आशंका की जाती है कि निर्णयों, आदेशों और डिक्रियों आदि को हिंदी में देने की अपेक्षा को अधिक अच्छे रूप में नहीं माना जाएगा ।

एक उच्च न्यायालय से दूसरे में न्यायाधीशों और मुख्य न्यायमूर्तियों के स्थानांतरण की नीति के साथ उत्तरी राज्य में कृत्य करने वाले दक्षिण राज्यों के न्यायाधीश उत्तरी राज्यों में कार्य के साथ तालमेल करने में समर्थ नहीं होंगे, जब कि निर्णयों और आदेशों का हिंदी में दिया जाना उत्तरी राज्यों के न्यायाधीशों के लिए कोई समस्या उपस्थित नहीं करेगा । भारत में कुछ राज्यों में प्रचलित दशाओं में ऐसी अपेक्षा के विरुद्ध आंदोलनों के लिए अवसर दिए जाने से देश के कुछ भागों में विद्यमान अशांति और बढ़ेगी ।

मेरी दृष्टि से हमारे देश में अभी दशाएं ऐसा संशोधन करने के लिए और उच्च न्यायालयों/उच्चतम न्यायालय से निर्णयों और आदेशों को हिंदी में देना प्रारंभ करने के लिए अपेक्षा करने वाले निदेश जारी करने के लिए परिपक्व नहीं है और इसलिए इन कारणों से और बहुत से अन्य कारणों से निर्णयों, आदेशों और डिक्रियों आदि का हिंदी में डिक्टेशन देना प्रारंभ करने वाला परिवर्तन पूर्ण रूप से निष्फल प्रक्रिया होगी ।''

<u>माननीय श्री न्यायमूर्ति के. एस. परिपूर्णन</u>

''आपके तारीख 8.10.2007 के पत्र के प्रति निर्देश से, प्रथमतः मुझे आपसे उत्तर

जल्दी न भेजने के लिए क्षमा मांगनी है । इसका कारण यह था की मेरी पत्नी पिछले दो सप्ताहों से अस्पताल में थी और मेरे पास अपने बहुत से कार्यों को करने के लिए उचित सहायता नहीं थी । कृपया मुझे विलंब के लिए क्षमा करें ।

2. संसदीय राजभाषा समिति की सिफारिशों का निचोड़ यह है कि संविधान के अनुच्छेद 348 का संशोधन किया जा सकता है जिससे कि विधायी प्रारुपण के लिए भाषा के रूप में हिंदी का परिवर्तन किया जा सके और यह कि पश्चात्वर्ती उच्च न्यायालयों और उच्चतम न्यायालय को अपने निर्णयों आदि को हिंदी में देने के लिए निदेशित किया जाना चाहिए ।

3. मुझे एकबार यह कहना है कि यह अव्यवहार्य और अबुद्धिमत्तापूर्ण है कम से कम बहुत से आने वाले वर्षों के लिए । 1949 में भी जब उक्त अनुच्छेद के बारे में संविधान सभा में विचार-विमर्श किया गया था तब तीव्र मतभेद था और समय के बीत जाने पर भी ; चीजों और घटनाओं में उस स्थिति से विचलन के लिए परिवर्तन नहीं हुआ है । संक्षेप में कहते हुए अंग्रेजी आज अंतरराष्ट्रीय भाषा है यहां तक कि रूसी, जर्मन, अमेरिकन, फ्रेंच, जापानी, चीनी और अन्य राष्ट्र बड़े और वृहत रूप में उस भाषा को अंगीकार करते हैं और मुक्त रूप से उस भाषा का प्रयोग करते हैं, इसका कारण यह है कि वैज्ञानिक, प्रौद्योगिकी, सांस्कृतिक और अन्य विश्वव्यापी उन्नतियों ने संपूर्ण संसार में जनता को अंग्रेजी को ऐसे सभी क्षेत्रों में अभिव्यक्ति, विचार ओर संचार के माध्यम के रूप में स्वीकार करने के लिए विवश किया है । भारत, पाकिस्तान, बंगलादेश में भी मामला समान है । इन परिस्थितियों में क्या भारत अकेला पृथक खड़ा रह सकता है और ऐसी महान विद्या और विशेषज्ञता के लाभ को खो सकता है ? इसके अतिरिक्त असंख्य व्यक्तियों ने जो सभी राष्ट्रिकताओं और जातियों के हैं, विदेशों में (अंग्रेजी में) 'शिक्षा' प्राप्त की है और बहुत से भारतीय बहुत से ऐसे बाहर के देशों में नियोजित है, जिन्होंने अंग्रेजी भाषा को जीवन के सभी पहलुओं, शैक्षणिक, वृत्तिक, वैज्ञानिक, सांस्कृतिक आदि में अंगीकार किया है, - और क्या यह बुद्धिमतापूर्ण होगा कि समय की इस दूरी पर जीवन में ऐसी वास्तविकताओं की उपेक्षा की

जाए, सिवाय खतरे में पड़ने के ?

4. इससे अधिक एक अनुभवी न्यायाधीश के रूप में आपको यह कहे जाने की आवश्यकता है कि भारत में बहुत सी विधियों ने अंग्रेजी सामान्य विधि को बड़ी सीमा तक अंगीकार और आत्मसात किया है और ऐसी विभिन्न विधियों पर न केवल अंग्रेजी न्यायालयों द्वारा अपितु अमेरिकन, आस्ट्रेलियन, कैनेडियन और दक्षिण अफ्रीका के न्यायालयों द्वारा भी दिए गए विनिश्चयों ने हमारे विनिश्चयों को प्रभावित किया है और ऐसा कर रहे हैं, क्योंकि यह केवल सामान्य बुद्धि है और प्राकृतिक है कि प्रसन्नतापूर्वक 'प्रकाश और ज्ञान को' चाहे वह किसी भी दिशा से आए, स्वीकार करें । क्या यह विधि के उचित विकास के लिए संभव, साध्य और किसी भी रीति से सहायक होगा कि ऐसी पहुंच को विधि के शासन की जड़ों को हानि कारित किए बिना छोड़ दिया जाए या त्याग दिया जाए, जिसे कि भारत ने अंग्रेजों से अंगीकार और स्वीकार किया है । क्या यह आत्मघाती नीति नहीं है जो कि राष्ट्र के लिए बहुत अधिक महंगी होगी ।

5. कृपया भारत की संविधान सभा की बहसों को देखें जो 12, 13 और 14 सितंबर, 1949 को की गई थीं - इनके ब्यौरे किताब (सरकारी रिपोर्ट) 'संविधान सभा विचार-विमर्श - वॉल्यूम-I' के पृष्ठ 1265 से 1462 पर देखे जा सकते हैं । जब अनुच्छेद 348 के लिए विधेयक का प्रस्ताव रखा गया था तब बहुत से पहलुओं पर माननीय सदस्यों के बीच जोरदार और विद्वतापूर्ण विचार-विमर्श हुआ था और श्री एन. गोपाला स्वामी आयंगर ने अंततः सभा को विधेयकों का प्रारुपण करने के लिए और उच्च न्यायालयों तथा उच्चतम न्यायालय में उपयोग के लिए भाषा के रूप में अंग्रेजी को प्रतिधारित करते हुए अनुच्छेद 348 को अंगीकार करने के लिए मना लिया था। मैं इस पर व्यापक रूप से चर्चा नहीं कर रहा हूं क्योंकि यह ऐसा विषय है जो सरकारी रूप से प्रकाशित पुस्तक में और ब्यौरेवार मिलता है ।

6. मैं स्पष्ट रूप से संविधान के अनुच्छेद 348 का संशोधन करने के प्रस्ताव के विरुद्ध हूं और मैं ऐसा 1949 से हुई विश्व की घटनाओं का और उन सभी परिस्थितियों का, जिनके द्वारा हमने अंग्रेजी भाषा को स्वीकार किया, अंगीकार किया है और सारतः रूप से

उसका लाभ उठाया है, समग्र रूप से ध्यान में रखते हुए कर रहा हूं ।

7. उपसंहार करने से पूर्व मैं आपके ध्यान में यह तथ्य लाना चाहता हूं कि बार के सुविज्ञात और अनुभवी सदस्य भी संशोधन के लिए प्रस्ताव के, जैसा वह इस समय प्रस्तावित है, विरुद्ध हैं । इस संबंध में कृपया श्री टी. पी. केलू नाम्बियार, एम.ए., एम.एल., वरिष्ठ अधिवक्ता, केरल उच्च न्यायालय, एक प्रसिद्ध वकील, जिनकी 50 वर्षों से अधिक की प्रतिष्ठा है, द्वारा 2008(1) के.एल.टी जरनल सेक्शन के पृष्ठ 18 - 21 पर लिखे गए पांडित्यपूर्ण किंतु छोटे लेख को देखें ।

डा. न्यायमूर्ति वी. एस. मालीमथ, भूतपूर्व मुख्य न्यायमूर्ति कर्नाटक और केरल ; अध्यक्ष केंद्रीय प्रशासनिक अधिकरण ; सदस्य राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग ; अध्यक्ष आपराधिक न्याय पद्धति सुधार संबंधी समिति

प्रिय डा. न्यायमूर्ति लक्षमणन्

तारीख 30.9.2008 का अपका पत्र प्राप्त कर प्रसन्नता हुई जिसमें मुझे विधायी विभाग द्वारा विधेयकों, अधिनियमों, नियमों आदि का मूल रूप से प्रारूपण करने में हिंदी के प्रयोग और उच्चतम न्यायालय तथा उच्च न्यायालय द्वारा निर्णयों और डिक्रियों को देने में हिंदी के प्रयोग पर संसदीय समिति द्वारा की गई सिफारिश पर अपने विचार/राय देने के लिए निमंत्रित किया गया है । मुझे विलंब के लिए दुख है । मैंने दोनों सिफारिशों पर निम्नलिखित रूप में अपने विचार बनाए हैं :-

राय

संविधान का अनुच्छेद 351 उपबंध करता है कि संघ का यह कर्तव्य होगा कि वह हिंदी भाषा का प्रसार बढ़ाए, जिससे वह भारत की सामासिक संस्कृति के सभी तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बन सकें । अनुच्छेद 343 हिंदी को संघ की राजभाषा के रूप में

घोषित करता है । अनुच्छेद 344 उपबंध करता है कि अंग्रेजी से हिंदी में परिवर्तन संविधान के प्रारंभ पर तुरंत नहीं किया जा सकता और यह प्रक्रिया धीरे-धीरे होनी चाहिए । संविधान की आठवीं अनुसूची में 18 भाषाओं की, जिसके अंतर्गत हिंदी है, सूची अंतर्विष्ट है । अनुच्छेद 344 एक आयोग के गठन को अनुध्यात करता है जो आठवीं अनुसूची में विनिर्दिष्ट विभिन्न भाषाओं का प्रतिनिधित्व करने वाले सदस्यों से मिलकर बनेगा जो राजभाषा के अधिकाधिक प्रयोग के लिए और अनुच्छेद 348 में वर्णित प्रयोजनों के लिए अर्थात् उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों में तथा विधेयकों, अधिनियमों, नियमों आदि के प्रारूपण में विधायी विभाग द्वारा प्रयोग की जाने वाली भाषा के लिए भी सिफारिशें करेगा । तत्पश्चात् आयोग की सिफारिशों पर अनुच्छेद 344(4) के अधीन उक्त प्रयोजन के लिए गठित संयुक्त संसदीय समिति द्वारा विचार किया जाएगा । उस समिति को आयोग की सिफारिशों पर विचार करना होगा और उन पर अपनी राय की रिपोर्ट राष्ट्रपति को करनी होगी । राष्ट्रपति रिपोर्ट पर विचार करने के पश्चात् उस संपूर्ण रिपोर्ट या उसके किसी भाग के अनुसार निदेश जारी करेगा ।

अनुच्छेद 351 में यथा उपबंधित अंतिम उद्देश्य हिंदी भाषा का प्रसार और विकास तथा भारत की सामसिक संस्कृति की अभिवृद्धि करना है । अनुच्छेद 343 और 344 संघ के सभी शासकीय प्रयोजनों के लिए हिंदी का उपयोग किए जाने के लिए और उसकी पूर्ति के लिए उन्नति की गति का अवधारण करने के लिए संक्रमणकालीन प्रक्रिया के बारे में हैं । संविधान के निर्माताओं की सर्वोपरि चिंता, जो कि संविधान सभा के विचार-विमर्शों में देखी जा सकती है, अन्य भाषाओं को बोलने वाली जनता पर उनकी इच्छाओं के विरुद्ध हिंदी के प्रयोग को अधिरोपित न करने की है ।

2. वही चिंता संविधान के अनुच्छेद 348(1)(क) और (ख) से प्रकट होती है जो कि उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों में प्रयोग की जाने वाली भाषा और विधेयकों, अधिनियमों, आदेशों, नियमों, विनियमों और उप विधियों के प्राधिकृत पाठ में प्रयोग की

जाने वाली भाषा के अंग्रेजी से हिंदी में परिवर्तन के बारे में है । जब तक कि संसद विधि द्वारा अन्यथा उपबंध नहीं करती है तब तक उच्चतम न्यायालय और प्रत्येक उच्च न्यायालय में कार्यवाहियां और सभी विधेयकों, अधिनियमों आदि के प्राधिकृत पाठ अंग्रेजी में होंगे । अनुच्छेद 349, अनुच्छेद 348(1) द्वारा अनुध्यात विधियों का अधिनियमन करने के लिए विशेष प्रक्रिया का उपबंध करता है । अनुच्छेद 348(1) द्वारा अनुध्यात किसी विधि को अधिनियमित करने के लिए कोई विधेयक राष्ट्रपति की मंजूरी के बिना पुरःस्थापित नहीं किया जा सकता है, जो राष्ट्रपति द्वारा आयोग की सिफारिश और अनुच्छेद 344(4) के अधीन गठित समिति की रिपोर्ट पर विचार करने के पश्चात् दी जा सकती है ।

अनुच्छेद 344 के अधीन गठित समिति ने अनुच्छेद 348 के अधीन दो सिफारिशें 16.8(घ) और 16.8(ङ) की है और भारत के विधि आयोग की राय मांगी है । सिफारिशें यथा निम्नलिखित हैं :-

> "16.8(घ) संविधान के अनुच्छेद 348 को विधायी विभाग को हिंदी में मूल रूप से प्रारूपण करने का कार्य हाथ में लेने में समर्थ बनाने के लिए संशोधित किया जा सकता है ।
>
> 16.8(ङ) संविधान के अनुच्छेद 348 के संशोधन के पश्चात् उच्च न्यायालयों/ उच्चतम न्यायालय से अपने निर्णयों और डिक्रियों आदि को हिंदी में देना प्रारंभ करने के लिए कहा जाना चाहिए जिससे कि बड़ी संख्या में सरकारी विभाग, जो न्यायिक/अर्ध न्यायिक कृत्य कर रहे हैं, हिंदी में आदेश देने में समर्थ हो सकें । इस समय ये विभाग हिंदी में आदेश पारित करने में असमर्थ हैं क्योंकि उच्च न्यायालयों/उच्चतम न्यायालय में उनके आदेश के विरुद्ध अपीलें अंग्रेजी में संचालित की जानी होती हैं ।

3. समिति की सिफारिश 16.8(घ) यह है कि <u>अनुच्छेद 348 को</u> विधेयकों, अधिनियमों,

नियमों आदि के प्रारूपण का कार्य हाथ में लेने के लिए संशोधित किया जाए । मुझे अवश्य यह बताना चाहिए कि अनुच्छेद 348 का संशोधन करने का प्रश्न ही नहीं उठता है । अनुच्छेद 348(1)(ख) जो अनुध्यात करता है वह संसद द्वारा इस निमित्त विधि का अधिनियमन है न कि अनुच्छेद 348 का स्वयं का संशोधन ।

विधियों का प्रारूपण करना बहुत ही कठिन और जटिल कार्य है । सुस्पष्ट और असंदिग्धतापूर्ण विधियों का अधिनियमन करने के लिए बहुत ही संपन्न और विशेषीकृत विधिक शब्दावली की आवश्यकता है । अंग्रेजी भाषा में बहुत ही समृद्ध विधिक शब्दावली है । जब तक विधिक शब्दों और उक्तियों की हिंदी शब्दावली का विकास नहीं हो जाता, उसे विधान की भाषा नहीं बनाया जा सकता है अतः मैं यह आदेश देने के लिए विधि बनाने के पक्ष में नहीं हूं कि विधेयकों, अधिनियमों, नियमों आदि का प्राधिकृत पाठ हिंदी में होना चाहिए ।

4. सिफारिश के विरुद्ध दूसरा कारण यह है कि यह अनावश्यक रूप से विरोध और विवाद को जन्म देगी । सत्रह संवैधानिक रूप मान्यता प्राप्त गैर हिंदी भाषाएं हैं । गैर हिंदी भाषी नागरिकों पर उनकी इच्छा के विरुद्ध हिंदी के अधिरोपण से देश की एकता और एकीकरण पर प्रभाव पड़ने की संभावना है । हमने देखा है कि कैसे महाराष्ट्र राज्य में जनता ने अभी हाल में हिंदी के प्रभाव के विरुद्ध विद्रोह किया था और हिंदी फिल्मों का, जिसमें अमिताभ बच्चन ने कार्य किया है, वहिष्कार तक किया था । गैर हिंदी भाषी जनता अभी तक विधान के लिए सामान्य माध्यम के रूप में हिंदी स्वीकार करने के पक्ष में नहीं है । विधान के क्षेत्र में हिंदी प्रारंभ करने के लिए कोई बड़ी अत्यावश्यकता या सीधी आवश्यकता नहीं है । गैर हिंदी भाषी राज्यों से बड़ी संख्या में संसद के सदस्य हिंदी में प्रारूपण की गई विधियों को पढ़ने या समझने में समर्थ नहीं होंगे । अतः ऐसे संसद सदस्यों के लिए विधि तंत्र की प्रक्रिया में प्रभावी रूप से योगदान देना बहुत कठिन होगा ।

प्रयोजन की पूर्ति इससे हो जाती है यदि अंग्रेजी पाठ के साथ हिंदी के पाठ को भी संलग्न कर दिया जाए । यह हिंदी बोलने वाले संसद सदस्यों की आवश्यकताओं की भी पूर्ति करेगा ।

मेरी राय में पहले हिंदी के प्रयोग के परिवर्तन को स्वीकार करने के लिए गैर हिंदी भाषी संसद सदस्यों और जनता को समझाने का प्रयास किया जाना चाहिए । भारत की गैर हिंदी भाषी जनता की सहमति के बिना विधियों आदि के प्रारूपण के लिए हिंदी को प्रारंभ करना राष्ट्रीय एकता और सामंजस्य के लिए हानिकर होगा । अतः यह सिफारिश नामंजूर किए जाने योग्य है ।

5. निर्देश : 16.8(ङ) : समिति की सिफारिश यह है कि उच्च न्यायालयों और उच्चतम न्यायालय से हिंदी में निर्णयों और डिक्रियों आदि को देने की अपेक्षा की जानी चाहिए ।

इस सिफारिश के लिए दिए गए कारण समिति के शब्दों में यथा निम्नलिखित हैं :

''जिससे कि बड़ी संख्या में सरकारी विभाग, जो न्यायिक, अर्ध न्यायिक कृत्य कर रहे हैं, हिंदी में आदेश देने में समर्थ हो सकें । इस समय ये विभाग हिंदी में आदेश पारित करने में असमर्थ हैं क्योंकि उच्च न्यायालयों/उच्चतम न्यायालय में उनके आदेशों के विरुद्ध अपील अंग्रेजी में संचालित की जानी होती हैं ।'' ये बिल्कुल भी ठोस कारण नहीं हैं जिनसे कि उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों को हिंदी में निर्णय और डिक्रियां देने के लिए विवश किया जाए ।

सरकारी अधिकारियों को हिंदी में आदेश पारित करने से कोई नहीं रोकता है । जब ऐसे आदेशों पर उच्च न्यायालयों और उच्चतम न्यायालय में आक्षेप किया जाता है तो इस समय अपनाई जाने वाली पद्धति यह है कि आदेशों का अंग्रेजी अनुवाद प्रस्तुत किया जाता है और यह कार्य न्यायालयों में पूर्ण सुगमतापूर्वक चल रहा है । जहां तक ऐसे सरकारी अधिकारियों को, जो केवल हिंदी जानते हैं और अंग्रेजी में दिए गए न्यायालयों के निर्णयों को पढ़ या समझ नहीं सकते हैं, समर्थ बनाने का संबंध है, उन्हें न्यायालय के ऐसे निर्णयों का जो अंग्रेजी में हैं हिंदी अनुवाद उपलब्ध कराया जा सकता है । यह उनकी समस्या सुलझा देगा ।

कुछ राज्यों में सरकारी अधिकारी अपने आदेशों को अपनी-अपनी राज्य भाषाओं में लिखते हैं । उनके लाभ के लिए न्यायालय के आदेशों का संबंधित राजभाषाओं में अनुवाद किया जा सकता है और उसे संबंधित अधिकारियों को दिया जा सकता है ।

अतः सिफारिशों के समर्थन में कथित कारणों में से कोई भी मान्य नहीं है ।

हमें नहीं भूलना चाहिए कि वकील और न्यायाधीश सदियों से अंग्रेजी भाषा का प्रयोग करते आ रहे हैं । उनकी विधिक शिक्षा अधिकांशतः अंग्रेजी में हुई है । हजारों विधियां अंग्रेजी में है । हिंदी में विधिक शब्दों, उक्तियों और सिद्धांतों का सुनिश्चित समतुल्य प्राप्त करना आसान नहीं है । विधियों पर अधिकांश पाठ्य-पुस्तकें अंग्रेजी में है । दूसरे देशों की पत्रिकाएं और विधि पुस्तकें, जो विनिश्चय करने की प्रक्रिया में सहायक है, अंग्रेजी में है । यदि हिंदी का उपयोग किया जाता है तो उनका उपयोग नहीं किया जा सकता है ।

मेरी राय में हिंदी में निर्णय देने के लिए अंग्रेजी से हिंदी में परिवर्तन करने के लिए समय अभी परिपक्व नहीं है । हिंदी में परिवर्तन करने से मामलों के निपटाए जाने में विलंब और अधिक होगा ।

दूसरे देशों के प्रसिद्ध वकील, यदि हिंदी प्रारंभ की जाती है तो, हमारे न्यायालयों में बहस नहीं कर सकेंगे । संपूर्ण विधिक समुदाय, जिसमें वकील और न्यायाधीश हैं, उच्च न्यायालयों और उच्चतम न्यायाल में हिंदी प्रारंभ करने के विरुद्ध होगा । इस प्रकार उच्चतर न्यायालयों में हिंदी का प्रारंभ लाभ से अधिक समस्याएं उत्पन्न करेगा ।

यह पर्याप्त होगा यदि उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों के विनिश्चयों का हिंदी और अन्य राजभाषाओं में अनुवाद करने के लिए उपबंध कर दिया जाए । यदि वास्तविक उद्देश्य मुकदमा लड़ने वाले को अपने मामले में विनिश्चय को समझने में समर्थ बनाने का है तो यह उस प्रयोजन की पूर्ति कर देगा यदि उसको अनुवाद उपलब्ध करा दिया जाता है ।

अतः मैं कोई भी ऐसा अच्छा कारण नहीं देखता हूं जिससे कि उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों में अंग्रेजी के वर्तमान उपयोग में बाधा डाली जाए । देश पर्याप्त संख्या में अन्य समस्याओं का सामना कर रहा है । हमें और समस्याओं को नहीं जोड़ना चाहिए और उच्चतम न्यायालय तथा उच्च न्यायालयों के सुगम कृत्यकरण में बाधा नहीं डालनी चाहिए । मैं समिति की सिफारिश 16.8(ङ) के पूर्णतया विरुद्ध हूं ।

मैं दृढ़ता से आपसे आग्रह करता हूं कि आप समिति की दोनों सिफारिशों का विरोध करें ।

श्री पी. पी. राव, वरिष्ठ अधिवक्ता

संसदीय राजभाषा समिति की सिफारिशों के संबंध में तारीख 8 अक्तूबर, 2007 के आपके उदारतापूर्ण पत्र के उत्तर में यह है । मैं समिति द्वारा क्रम संख्या 16.8(घ) और (ङ) पर की गई सिफारिशों के कार्यान्वयन के पक्ष में निम्नलिखित कारणों से नहीं हूं :

उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों में अंग्रेजी से हिंदी में परिवर्तन किए जाने के लिए परिस्थितियां परिपक्व नहीं हैं । देश के कई भागों में अभी तक जनता हिंदी से पूर्ण रूप से अवगत नहीं है, ऐसा संघ के अनुच्छेद 351 में हिंदी भाषा के प्रसार का संवर्धन करने के लिए दी गई आज्ञा के होते हुए भी है । उच्चतम न्यायालय और सभी उच्च न्यायालयों के न्यायाधीश हिंदी भाषी राज्यों और साथ ही गैर हिंदी भाषी राज्यों के होते हैं । इसलिए यह आवश्यक है कि अंग्रेजी को जारी रखा जाए, जो उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों में सभी भारतीयों के लिए सामान्य भाषा है । जैसा आपको विदित है, राजभाषा अधिनियम, 1963 की धारा 7 उच्च न्यायालयों द्वारा पारित किए गए या दिए गए किसी निर्णय, डिक्री या आदेश के प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा के अतिरिक्त किसी राज्य की राजभाषा के रूप में उस राज्य के लिए हिंदी के उपयोग की अनुज्ञा देती है, परंतु यह तब जबकि किसी राज्य का राज्यपाल राष्ट्रपति की पूर्व सहमति से ऐसे उपयोग को प्राधिकृत करता है । ऐसे बहुत कम उदाहरण हैं जहां उच्च न्यायालयों के निर्णय हिंदी में

लिखे गए हैं । ऐसे मामलों में, जब व्यथित पक्षकार को उच्चतम न्यायालय में जाना होता है तो समस्त निर्णय का अंग्रेजी में अनुवाद कराना होता है जिसमें मुकदमा लड़ने वाले के लिए समय और अतिरिक्त व्यय अंतर्वलित होते हैं, जिनसे बचा जा सकता है । उस समय तक जब तक कि उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों के न्यायाधीश हिंदी से पूर्णतया परिचित नहीं हो जाते हैं और हिंदी में निर्णय लिखने के लिए पर्याप्त रूप से प्रवीण नहीं हो जाते हैं यह उचित नहीं है कि संविधान का संशोधन किया जाए ।

जहां तक विधायी कामकाज का संबंध है हिंदी भाषी राज्यों में पहले से ही विधेयक हिंदी भाषा में तैयार किए जाते हैं और बहस हिंदी भाषा में होती हैं । इसी प्रकार सरकारी आदेश हिंदी भाषा में पारित किए जाते हैं । बहुत से मामलों में फाइलों पर नोटिंग भी हिंदी भाषा में की जाती है । राजभाषा अधिनियम, 1965 की धारा 3 संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिए और संसद में प्रयोग के लिए और संसद में कामकाज के संव्यवहार के लिए हिंदी के अतिरिक्त अंग्रेजी भाषा के बनाए रखने के लिए उपबंध करती है ।

सिफारिशों के सफलतापूर्वक कार्यान्वयन के लिए, यह आवश्यक है कि संपूर्ण देश में हिंदी का प्रसार करके पहले आधार भूमि उस सीमा तक तैयार की जाए कि जिससे उच्चतम न्यायालय और सभी उच्च न्यायालयों में कार्यवाहियों के संबंध में अंग्रेजी भाषा से हिंदी भाषा में परिवर्तन करने से किसी को भी असुविधा का अनुभव न हो । कुछ समय पहले दक्षिण में स्कूलों में हिंदी को अनिवार्य भाषा बनाने के लिए बड़े पैमाने पर हिंसा द्वारा विरोध किया गया था । प्रधानमंत्री नेहरू ने यह आश्वासन दिया था कि अंग्रेजी जनता की इच्छा के विरुद्ध हिंदी द्वारा प्रतिस्थापित नहीं की जाएगी और यह कि यथा स्थिति तब तक बनाए रखी जाएगी जब तक कि गैर हिंदी भाषी जनता स्वयं परिवर्तन के लिए इच्छा न करे । भाषा एक संवेदनशील मुद्दा है जो आसानी से जनता की भावनाओं को जागृत कर सकता है । राष्ट्रीय एकीकरण और देश की एकता तथा पूर्ण सुदृढ़ता बनाए रखने के हित में यह वांछनीय नहीं है कि ऐसे मुद्दे को उस समय उभारा जाए जब कई प्रकार के

विस्फोट और विभाजन शक्तियां कार्य कर रही हैं । एकता के हित में देश के सभी नागरिकों के बीच भ्रातृत्व का संवर्धन करने के लिए प्रत्येक प्रयास किया जाना चाहिए ।

मुझे आशंका है कि संसदीय समिति की सिफारिशों को कार्यान्वित करने का कोई भी प्रयास इस संकटकाल में देश के कुछ भागों में हिंसात्मक विरोधों और आंदोलनों का कारण बन सकता है ।

श्री टी. एल. विश्वनाथ अय्यर, वरिष्ठ अधिवक्ता

"भारत के संविधान के अनुच्छेद 348 का संशोधन करने के संबंध में तारीख 11 अक्तूबर, 2007 के आपका पत्र में प्रस्तावित संशोधनों पर अपने निम्नलिखित विचार प्रकट कर रहा हूं ।

(क) हिंदी में अधिनियमितियों का मूलरूप से प्रारूपण करने के संबंध में

मैं नहीं समझता हूं कि यह स्वागत या सलाहयोग्य है । राजकीय भाषाओं में से एक के रूप में हिंदी को कोई भी प्रास्थिति प्रदान की गई हो किंतु तथ्य यह रहता है कि सभी उच्च न्यायालय अपना न्यायिक कामकाज अंग्रेजी में करते हैं । इसके अंतर्गत उच्चतम न्यायालय भी है । कानूनों का निर्वचन सामान्य मामलों में से एक है जो हमारे न्यायालयों में प्रतिदिन होता है । अंग्रेजी में प्रारूपकारिता अपने स्वयं के अर्थ भेदों और अनम्यताओं के साथ उन्नति के उस स्तर पर पहुंच गई है जिस तक कि मैं नहीं समझता हूं कि किसी अन्य भाषा में प्रारूपण अभी तक पहुंचा है । अंग्रेजी में कानूनों के निर्वचन में निर्णयज विधि संपन्न और बहुत अधिक संख्या में है । हमारे पास इसके अतिरिक्त यू.के. और राष्ट्रमंडलीय देशों के, अमरिका के भी, समतुल्य कानूनों का बहुल खजाना है ।

यह सभी अन्य भाषाओं में कानूनों का निर्वचन करते समय अनुपलब्ध और व्यर्थ हो जाएगा । ऐसे कानूनों को, विशेष रूप से दक्षिण भारत के बहुत बड़े टुकड़े में, समझने का

सामान्य माध्यम अंग्रेजी है । इसको अंग्रेजी भाषा में प्रारूपण छोड़ देने से अस्त-व्यस्त नहीं किया जा सकता । हिंदी में मूल अधिनियमितियों का प्रारूपण करने से कुछ भी लाभ नहीं होगा सिवाय इसके कि शायद अहम की संतुष्टि हो ।

हम इस प्रक्रिया में विभिन्न उच्च न्यायालयों की बहुत सी निर्णयज विधि के साथ समवर्ती सूची में उसी विषय पर अन्य राज्यों के कानूनों के साथ (अर्थात् किराया नियंत्रण विधान) तुलना के लाभ को भी खो सकते हैं । यह देश में उपलब्ध विधिक ज्ञान का अतिरिक्त नुकसान और उसकी हानि होगी ।

दूसरे प्रश्न के संबंध में कि उच्च न्यायालयों/उच्चतम न्यायालय को हिंदी में अपने निर्णय देना प्रारंभ करना चाहिए मैं दृढ़तापूर्वक इस विचार का हूं कि यह एक अवनतिकारी कदम होगा । अंग्रेजी तब से जब वरिष्ठ न्यायालय इस देश में स्थापित किए गए थे, लगभग डेढ़ शताब्दी पूर्व या उससे भी पहले, निर्णयों की भाषा रही है । राष्ट्रमंडलीय देशों की, जिनमें भारत एक है, न्यायालय की भाषा भी अंग्रेजी है । पूर्व निर्णयों का सिद्धांत भी देश में उस तरफ झुका हुआ है और न्यायिक पद्धति के मुख्य सिद्धांतों में से एक है । हमारे न्यायालय निर्बाध रूप से अंग्रेजी का प्रयोग करते हैं । अमरीकन और राष्ट्रमंडलीय पूर्व निर्णय सभी अंग्रेजी में है । यदि निर्णय हिंदी में होंगे तो पूर्व निर्णयों से अपरिहार्य उद्धरणों की दृष्टि से वे अंग्रेजी के सभी उद्धरणों के साथ भागतः हिंदी में होंगे । निर्णय विकृत दिखाई पड़ेगा ।

संपूर्ण देश के लिए एकरूप न्यायिक पद्धति का विचार आवश्यक रूप से यह है कि देश के प्रत्येक भाग में लागू विधिक सिद्धांतों का एकरूप सैट हो जो न्यायालयों द्वारा अपने निर्णयों के माध्यम से देश के अन्य भागों में न्यायिक पद्धति पर आधारित किया गया हो । यह लाभ खो जाएगा यदि निर्णय अंग्रेजी के स्थान पर हिंदी में लिखे जाते हैं ।

यदि निर्णय हिंदी में लिखे जाते हैं तो इसके लिए विधिक शब्दावली के रूप में बहुत

अधिक साहित्य की आवश्यकता होगी । निर्णयों का दिया जाना, जो बहुत से न्यायालयों में पहले से ही विलंब से हो रहा है, और विलंबित हो जाएगा यदि ऐसे न्यायाधीशों पर, जो हिंदी में लिखने के लिए प्रशिक्षित नहीं है, हिंदी में निर्णय लिखने के लिए जोर दिया जाता है ।

इसके अतिरिक्त संचार के क्षेत्र में, विशेष रूप से कंप्यूटरों में, आधुनिकतम प्रौद्योगिकी प्रोन्नति की अनुपलब्धता होगी, जो कि हमारी पद्धति के माध्यम से प्रचलित होने में अपना समय लेगी ।

हमें यह भी विश्लेषण करना चाहिए कि अंग्रेजी में निर्णयों का लाभ क्या होगा। ऐसा नहीं है कि मानो ये निर्णय संबंधित विभागों द्वारा नहीं समझे जाएंगे । न वे विभाग हिंदी में या प्रादेशिक भाषा में अपने आदेश पारित करने से निवारित किए जाएंगे । वास्तव में सामान्य व्यक्ति को मिलने वाले अधिकांश सरकारी आदेश पहले से ही प्रादेशिक भाषा में किए जा रहे हैं । यहां तक कि फाइलों पर नोटिंग भी बहुधा प्रादेशिक भाषा में की जाती है ।

अतः सरकारी विभागों को न्यायालयों की भाषा हिंदी में होने से कोई विशेष लाभ या अभिलाभ नहीं होगा ।

हमारे न्यायालयों के निर्णय आजकल विदेशी न्यायालयों में उद्धृत किए जा रहे हैं, ठीक वैसे ही जैसे हमारे न्यायालय अपने कारणों की पुष्टि करने के लिए विदेशी निर्णयों पर भारी झुकाव रखते हैं । वह पहुंच और आदर जो हमारे न्यायालय विदेशी न्यायालयों द्वारा ऐसे भरोसा करने से अर्जित कर रहे हैं वह हमारे निर्णयों के हिंदी में होने से पूर्ण रूप से खो जाएगा ।

वह लाभ, जो न्यायालय की भाषा के रूप में हिंदी को अपनाकर होगा यदि कोई होगा तो वह अंग्रेजी को न्यायालय की भाषा के रूप में प्रतिधारित करने से बहुत कम होगा ।"

श्री विजय हंसारिया, वरिष्ठ अधिवक्ता

आप पर्याप्त दयालु थे कि आपने उच्च न्यायालयों/उच्चतम न्यायालय की शासकीय भाषा के संबंध में संविधान के अनुच्छेद 348 में प्रस्तावित संशोधन पर मेरे विचार जानने के लिए पूर्वोक्त पत्र लिखा ।

मैंने इस विषय की परीक्षा की है और अपने सहयोगियों के साथ इस पर चर्चा भी की है । मेरी राय में पूर्वोक्त विषय पर संसदीय राजभाषा समिति की सिफारिश स्वीकार करने के लिए निम्नलिखित कारणों से कोई औचित्य नहीं है :

1. संसदीय समिति की सिफारिश इस आधार पर प्रतीत होती है कि उच्च न्यायालयों/ उच्चतम न्यायालय के निर्णय अंग्रेजी में होने के कारण विभिन्न सरकारी विभाग हिंदी में आदेश पारित करने में समर्थ नहीं हैं । यह कोई विधिमान्य कारण नहीं है क्योंकि देश में सर्वत्र सभी राज्यों में, शासकीय आदेश या तो अंग्रेजी में या राज्य की संबंधित राजभाषा में, जो हिंदी, तेलगू या असमी हो सकती है, पारित किए जाते हैं । जब कभी इन आदेशों पर उच्च न्यायालयों में आक्षेप किया जाता है तो उनका अंग्रेजी में अनुवाद किया जाता है और तब उसे उच्च न्यायालय में फाइल किया जाता है । तथापि कुछ उच्च न्यायालय राज्य की प्रादेशिक भाषा में भी दस्तावेज फाइल करने की अनुज्ञा देते हैं ।

   इसलिए भी जब कभी उच्च न्यायालयों/उच्चतम न्यायालय द्वारा कोई निदेश दिया जाता है, तो उसे संबंधित सरकारों द्वारा संबंधित राज्य की राजभाषा में, जो आवश्यक रूप से अंग्रेजी नहीं भी हो सकती है, पारित करके कार्यान्वित किया जा सकता है ।

2. चूंकि भारत एक बहु-भाषी देश है, अतः हमारे देश की जनसंख्या का एक बहुत बड़ा भाग और उच्च न्यायालयों/उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश बड़ी संख्या में हिंदी

भाषा से सुपरिचित नहीं हैं । यदि उच्च न्यायालयों/उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों से हिंदी में अपने आदेश/निर्णय देने के लिए कहा जाता है, उन्हें इसकी अनुज्ञा दी जाती है, तो वे न्यायाधीश, जो हिंदी भाषा से सुपरिचित नहीं है, उसे समझने में समर्थ नहीं होंगे । हमारी न्यायिक पद्धति निर्णीतानुसरण के सिद्धांत द्वारा शासित होती हैं, यदि न्यायाधीश अपने स्वयं के न्यायालय के या विशिष्ट न्यायालय के निर्णय समझने में समर्थ नहीं होंगे तो इससे बहुत सा संभ्रम और संदिग्धता कारित होगी और उसका परिणाम विरोधी निर्णयों को देने में हो सकता है ।

आगे हमारी न्यायिक पद्धति में एक उच्च न्यायालय के निर्णय पर भरोसा किया जाता है और उसे दूसरे उच्च न्यायालय के मामले में निर्दिष्ट किया जाता है । यद्यपि एक उच्च न्यायालय का निर्णय दूसरे उच्च न्यायालय में आबद्धकर पूर्व निर्णय का मूल्य नहीं रखता है, उसका आग्रही मूल्य भी नहीं होता है । यदि निर्णयों को हिंदी में सुनाया जाता है तो, उन्हें गैर हिंदी भाषी राज्यों में नहीं समझा जा सकता है ।

3. यदि हिंदी को उच्च न्यायालयों की राजकीय भाषा होने की अनुज्ञा दी जाती है तो गैर हिंदी भाषी राज्यों से समरूप मांग आ सकती है कि उनके उच्च न्यायालयों में राज्य की प्रादेशिक भाषा का उपयोग किया जाना चाहिए ।

4. आगे उच्च न्यायालयों के निर्णय उच्चतम न्यायालय में अपील योग्य होते हैं और सर्वोच्च न्यायालय में ऐसे न्यायाधीश होते हैं जिन में से बहुतों को हिंदी भाषा का बिल्कुल भी ज्ञान नहीं होता । हिंदी में निर्णय लिखने में इस संबंध में भी समस्याएं उत्पन्न होंगी ।

5. हमारी संवैधानिक स्कीम में उच्च न्यायालयों के न्यायाधीश स्थानांतरणीय हैं और हमारे पास हिंदी अंचल क्षेत्र में ऐसे बहुत से न्यायाधीश हैं जो हिंदी से सुपरिचित

नहीं हैं । हिंदी में दिए गए निर्णय गैर हिंदी क्षेत्र से स्थानांतरित न्यायाधीशों द्वारा नहीं भी समझे जा सकते हैं । परिणामस्वरूप उच्च न्यायालयों में ऐसे न्यायाधीश होंगे जो अपने स्वयं के न्यायालय के निर्णय समझने में समर्थ नहीं होंगे ।

6. राजभाषा अधिनियम, 1963 की धारा 7 के अधीन राज्यपाल, राष्ट्रपति की पूर्व सहमति से, हिंदी या राज्य की राजभाषा का प्रयोग उस राज्य के लिए उच्च न्यायालय के निर्णयों/आदेशों के प्रयोजन के लिए प्राधिकृत कर सकता है । तथापि ऐसे मामले में यह धारा आगे अपेक्षा करती है कि ऐसे निर्णयों/आदेशों के साथ उच्च न्यायालय के प्राधिकार से जारी किया गया अंग्रेजी भाषा में उनका अनुवाद होगा । " इस प्रकार यदि उच्च न्यायालय के निर्णय/आदेश को हिंदी में दिए जाने की अनुज्ञा दी जाती है तो यह अपेक्षा की जाएगी कि उसके साथ अंग्रेजी में निर्णय का अनुवाद हो । यह न्यायालयों के कार्यभार को, जो पहले से ही अधिक भार ग्रस्त हैं, बढ़ा देगा ।

पूर्वोक्त कारणों की दृष्टि से यह मेरी विनम्र राय है कि भारत का विधि आयोग अपनी यह राय दे सकता है कि यह वांछनीय नहीं है कि उच्च न्यायालयों/ उच्चतम न्यायालय द्वारा निर्णयों को हिंदी भाषा में देने की अनुज्ञा दी जाए ।"

श्री के. के. वेणुगोपाल, वरिष्ठ अधिवक्ता

"8 अक्तूबर, 2007 के आपके पत्र के लिए धन्यवाद ।

मैं राजभाषा समिति की सिफारिश पर अपने संक्षिप्त विचार निम्नलिखित रूप में प्रकट कर रहा हूं :

1. यह प्रस्ताव देश की एकता को विभाजित करने वाला होगा । भारत के संविधान की आठवीं अनुसूची में 22 भाषाएं हैं, जिन्हें संविधान द्वारा मान्यता प्राप्त है । भाषा जैसा

कि हम सब जानते हैं, बहुत भावनात्मक मुद्दा है, जिसके परिणामस्वरूप भारत के नक्शे को भाषाविद् राज्यों में विभाजित करके पुनः खींचना पड़ा है । संविधान के छः दशकों के पश्चात् भी, हिंदी देश के बहुत से राज्यों में जनता के बहुत बड़े अनुभाग द्वारा नहीं बोली जाती है । संसद की समिति की सिफारिशों को कार्यान्वित करना उस सामंजस्य को बहुत अधिक विच्छिन्न करने वाला होगा, जो विभिन्न राज्यों की जनता के बीच इस समय विद्यमान है । मुझे गंभीर रूप से इस बात की आशंका है कि हिंदी को अधिरोपित किए जाने के विरुद्ध दक्षिण के बहुत से राज्यों में भाषा आंदोलन, जैसा हमने पहले देखा है, हो सकते हैं । क्यों कोई चाहता है कि इतिहास स्वयं को दोहराए ।

2. आज हमारे यहां उच्चतर न्यायपालिका में देश के विभिन्न भागों से न्यायाधीश हैं, जिनमें से कुछ हिंदी नहीं समझते हैं । यदि भारत के उच्चतम न्यायालय की भाषा हिंदी होगी तो शायद दक्षिण राज्यों से कोई न्यायाधीश संभवतः न्यायपीठ में नहीं हो सकेगा और न्यायालय के विचार-विमर्श में बुद्धिमत्तापूर्वक और प्रभावी रूप से भाग नहीं ले सकेगा । ऐसी ही स्थिति वहां होगी जहां कुछ राज्यों के उच्च न्यायालयें के ऐसे न्यायाधीश, जो हिंदी में तर्क समझने में और निर्णय लिखने में समर्थ होने के लिए हिंदी में प्रवीणता नहीं रखते हैं - हिंदी भाषी राज्यों में होंगे । गैर हिंदी भाषी राज्यों के वकील अत्यधिक अलाभकारी स्थिति में होंगे ।

3. मैं एक और समस्या देखता हूं । अनुवाद की लागत निषेधात्मक है । यदि सरकारी और अन्य दस्तावेज अंग्रेजी में होंगे तो, जैसा कि बहुत से राज्यों में है, उन सबको अनुवादित किया जाना होगा । ऐसा ही उन साक्ष्य और निर्णयों के बारे में होगा जो अंग्रेजी में है । आज अंग्रेजी वह भाषा है, जिसमें दक्षिण एशियाई देशों में, नेपाल को छोड़कर, निर्णय लिखे जाते हैं । हमारे निर्णय कोई प्रभाव और बल, जैसे बंगलादेश और श्रीलंका में, नहीं रखेंगे । न वे अंग्रेजी बोलने वाले संसार के अन्य

भागों में, जिनमें मुख्य रूप से राष्टमंडलीय देश हैं, पढ़े और समझे जाएंगे । यह देश के बड़े हित में है कि इन मामलों को वहीं छोड़ दिया जाए जहां वे हैं ।

ये मेरे कुछ विचार हैं जो निश्चित रूप से इस देश की जनता के बहुत बड़े भाग के दृष्टिकोण का प्रतिनिधित्व करते हैं । मुझे इसमें कोई संदेह नहीं है कि संसदीय समिति की सिफारिशों को कार्यान्वित करने का कोई प्रयास भारत की जनता के बीच विभाजन और विरोध लाएगा ।''

श्री अरविंद दातार, वरिष्ठ अधिवक्ता

''1. संसदीय राजभाषा समिति ने क्रम संख्या 16.8(घ) और 16.8(ड) पर निम्नलिखित सिफारिशें की हैं :

''16.8(घ) संविधान के अनुच्छेद 348 का संशोधन किया जा सकता है जिससे कि विधायी विभाग को हिंदी में मूल प्रारूपण करने का कार्य हाथ में लेने में समर्थ बनाया जा सके ।

16.8(ड) संविधान के अनुच्छेद 348 के संशोधन के पश्चात् उच्च न्यायालयों/ उच्चतम न्यायालय से हिंदी में अपने निर्णयों और डिक्रियों आदि को देना प्रारंभ करने के लिए कहा जाना चाहिए जिससे कि बहुत बड़ी संख्या में सरकारी विभाग, जो न्यायिक/अर्ध न्यायिक कृत्य कर रहे हैं, हिंदी में आदेश देने में समर्थ हो सकें । इस समय ये विभाग हिंदी में आदेश पारित करने में असमर्थ हैं क्योंकि उच्च न्यायालयों / उच्चतम न्यायालय में उनके आदेश के विरुद्ध अपील अंग्रेजी में संचालित की जानी होती है ।''

2. ऐतिहासिक पृष्ठभूमि : अनुच्छेद 348(1) अपेक्षा करता है कि जब तक कि संसद विधि द्वारा अन्यथा उपबंध न करे तब तक उच्चतम न्यायालय और प्रत्येक उच्च

न्यायालय में सभी कार्यवाहियां अंग्रेजी भाषा में होंगी । अनुच्छेद 348(2) किसी राज्य के राज्यपाल को हिंदी का या किसी विशिष्ट राज्य में शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग होने वाली किसी अन्य भाषा का प्रयोग प्राधिकृत करने के लिए समर्थ बनाता है । खंड (2) अंग्रेजी से भिन्न किसी भाषा को किसी विशिष्ट उच्च न्यायालय में प्रयोग किए जाने के लिए समर्थ बनाता है । किंतु उसका परंतुक स्पष्ट रूप से कथित करता है कि निर्णय, डिक्री और आदेश किसी ऐसे परंतुक से प्रभावित नहीं होंगे । दूसरे शब्दों में उच्च न्यायालयों के निर्णय अंग्रेजी में होते रहेंगे । (इस पर अवश्य ध्यान दिया जाना चाहिए कि राष्ट्रपति की पूर्व सहमति अनुच्छेद 348 (2) के अधीन अपेक्षित है)

3. धारा 348, भारत सरकार अधिनियम, 1935 की धारा 214(5) और धारा 227 पर आधारित है, जिसमें अंग्रेजी को ऐसी भाषा के रूप में विहित किया गया है जिसका फेडरल न्यायालय और उच्च न्यायालयों की सभी कार्यवाहियों में प्रयोग किया जाएगा ।

4. संविधान सभा बहस : (सत्यापन करने और जोड़ने के लिए)

5. **सिफारिशों को कार्यान्वित करने में कठिनाई**

पैरा (घ) कार्यान्वित किए जाने के लिए कठिन है । किसी कानून का मूल प्रारूप कुछ अंग्रेजी विधियों के बारे में हिंदी में नहीं हो सकता । उदाहरण के लिए नये आयकर अधिनियम के अगले साल उद्घोषित किए जाने की आशा की जाती है । यह बहुत कठिन होगा कि अधिनियम का हिंदी में प्रारूपण किया जाए । करदाताओं की बहुत बड़ी संख्या अंग्रेजी भाषा बोलती है । कर व्यवसाइयों, लेखा परीक्षकों, विनिधानकर्ताओं का समुदाय सभी अंग्रेजी में कानून के प्रारूपण से परिचित हैं । हिंदी में कोई अधिनियमिति यथार्थतः उपयोगहीन होगी ।

6. भारत ने विभिन्न देशों के साथ कई दोहरे कराधान करारों पर हस्ताक्षर किए हैं। यदि भारतीय कर कानून हिंदी में होंगे तो इससे गंभीर कठिनाई उत्पन्न होगी ।

7. राजस्व विधियों से पृथक् कई नये विषयों जैसे सूचना प्रौद्योगिकी, तना सेल के विकास, टेलीग्राफ संबंधी विधियों और साइबर अपराध से संबंधित विधियों के बारे में केवल अंग्रेजी में उपबंध किया जा सकता है । बहुत से वाक्यांश और अभिव्यक्तियां हैं, जिनका अंग्रेजी में उपयोग किया जाता है । यह कठिन होगा और वस्तुतः जनता के समय और धन का, उन्हें हिंदी में तैयार करने के लिए, पूर्ण अपव्यय होगा ।

8. **उच्च न्यायालयों/उच्चतम न्यायालय के निर्णय**

8.1 यह व्यावहारिक रूप से असंभव है कि खंड 16.8(ङ) में सिफारिश को कार्यान्वित किया जाए । कई गैर हिंदी भाषी राज्यों में न्यायाधीशों को यह असंभव लगेगा कि वे अपने निर्णय हिंदी में दें ।

8.2 इस आशय का कोई संशोधन बहुत अधिक विरोध उत्पन्न करेगा और हिंदी प्रभुत्व के दोषारोपण को और आगे बढ़ाएगा ।

8.3 उन न्यायाधीशों के लिए भी जिनकी मातृ भाषा हिंदी है, हिंदी में निर्णय देना कठिन होगा । सभी उच्च न्यायालयों और उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों की विधिक शिक्षा अंग्रेजी में रही है । उन न्यायाधीशों ने, जो बार के सदस्य रहे हैं, सभी मामलों में केवल अंग्रेजी में कार्रवाई की है । सभी उच्च न्यायालयों में तर्क मुख्य रूप से अंग्रेजी में दिए जाते हैं । इसलिए यह असंभव होगा कि हिंदी में निर्णय दिए जाएं ।

8.4 कई केंद्रीय कानून संपूर्ण भारत में लागू होते हैं । यह समझना कठिन है कि कैसे कोई निर्णय कर विधियों, बौद्धिक संपदा और इसी प्रकार के विषयों के बारे में हिंदी

में दिया जा सकता है । निर्णय को स्पष्ट होना होता है और उसका विनिश्चय आधार सरलता से समझने योग्य होना चाहिए । उसको हिंदी में देने से संभ्रम और अव्यवस्था होगी, क्योंकि कई विधिक अभिव्यक्तियों के अर्थपूर्ण हिंदी सामानार्थक नहीं हैं ।

8.5 ऐसी दूरगामी सिफारिश का उद्देश्य स्पष्ट नहीं है । खंड 16.8(ङ) का विश्लेषण दर्शित करता है कि यह सिफारिश निम्नलिखित आधार पर की गई है :

(क) बड़ी संख्या में सरकारी विभाग, जो न्यायिक और अर्ध न्यायिक कृत्य कर रहे हैं, हिंदी में आदेश देने में समर्थ हों जाएंगे ।

(ख) इस समय ये विभाग हिंदी में आदेश पारित करने में असमर्थ हैं क्योंकि उनके आदेश के विरुद्ध अपील उच्च न्यायालयों/उच्चतम न्यायालय में अंग्रेजी में संचालित की जानी होती है ।

8.6 ये दोनों आधार उच्च न्यायालयों और उच्चतम न्यायालय द्वारा हिंदी में सभी निर्णय दिए जाने के लिए आधार नहीं हो सकते ।

(क) कई सरकारी विभागों में अर्ध न्यायिक प्रकृति के आदेश अंग्रेजी में पारित किए जाते हैं ।

(ख) अधिकतम संख्या में अर्ध न्यायिक आदेश राजस्व ओर सेवा मामलों में पारित किए जाते हैं । विभिन्न केंद्रीय अधिनियमितियों के अधीन अपील प्राधिकारी अपने आदेश अंग्रेजी में पारित करते हैं ।

(ग) यह स्पष्ट नहीं है कि कैसे अंग्रेजी में एक निर्णय किसी सरकारी विभाग को अपना आदेश हिंदी में देने में कोई बाधा कारित करेगा । यदि संबंधित सरकारी अधिकारी या प्राधिकारी अंग्रेजी समझने में असमर्थ हैं तो सादा तंत्र यह होगा कि उस विशिष्ट निर्णय का हिंदी में अनुवाद उपलब्ध कराया जाए ।

(घ) आधार (ख) के बारे में, यह स्पष्ट नहीं है कि अंग्रेजी में संचालित की जाने वाली अपील क्यों हिंदी में आदेश पारित करने के लिए विभागों को बाधित या असमर्थ करेगी । यदि कोई विभाग हिंदी में कोई आदेश पारित करना चाहता है तो वह ऐसा करने के लिए स्वतंत्र है । व्यथित पक्षकार आदेश पर आक्षेप करते समय उसका एक अंग्रेजी अनुवाद संलग्न करेगा । बहुधा राज्य सरकारों या केंद्रीय सरकार द्वारा पारित आदेशों का स्थानीय भाषा या हिंदी में पारित किए गए आदेश का अंग्रेजी में अनुवाद कराया जाता है और संबंधित उच्च न्यायालयों/उच्चतम न्यायालय द्वारा उन्हें विचारार्थ लिया जाता है ।

(ङ) उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश 10 से 15,000 तक से अधिक निर्णय प्रत्येक वर्ष देते हैं । रिपोर्ट किए गए मामले ही 12,000 पृष्ठों से अधिक में होते हैं । यह असंभव है कि उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों से, जो विभिन्न राज्यों से आते हैं, हिंदी में अपना निर्णय देने की आशा की जाए । यदि वे उन्हें हिंदी में दे भी दें फिर भी उनका विधिक और लेखावृत्ति वालों और विभिन्न उद्योग वालों की समझ के लिए अंग्रेजी में अनुवाद कराना असंभव कार्य होगा । (यह समस्या विभिन्न न्यायालयों के लिए बीस गुणा बढ़ जाएगी)

(च) ऐसी सिफारिश के कार्यान्वयन से मामलों के निपटाए जाने में और विलंब होगा । केवल इस कारण कि कुछ सरकारी विभाग अपने आदेश हिंदी में देना चाहते हैं, यह सभी उच्च न्यायालयों और उच्चतम न्यायालय से अपने निर्णय हिंदी में देने की अपेक्षा करने के लिए आधार नहीं हो सकता ।

(छ) वतर्मान संकट की घड़ी में, ऐसी किसी सिफारिश से गंभीर घर्षण, विशेष रूप से उत्तरी और दक्षिणी राज्यों के बीच, होंगे । अंग्रेजी एकीकरण की भाषा रही है और अंग्रेजी को हिंदी द्वारा प्रतिस्थापित करने का प्रयास गंभीर

परिणामों से परिपूर्ण है । यह उल्लेख करना संदर्भ से बाहर नहीं होगा कि चीन यह सुनिश्चित करने के लिए असाधारण प्रयास कर रहा है कि देश में अंग्रेजी पढ़े लिखे व्यक्ति हों । हमारा विश्व अर्थव्यवस्था में सबसे बड़ा लाभ अंग्रेजी भाषा में प्रवाह है । हमें उस लाभ को नष्ट नहीं करना चाहिए । हमारे न्यायालयों के निर्णय विभिन्न राष्ट्रमंडलीय देशों और अमरीका तथा यूरोप में भी उद्धृत किए जा रहे हैं । उच्च न्यायालय और उच्चतम न्यायालय से हिंदी में निर्णय देने की अपेक्षा करना एक अवनतिकारी कदम होगा ।

इसको अवश्य मान्यता दी जानी चाहिए कि उच्च न्यायालयों में अंग्रेजी को हिंदी या प्रादेशिक भाषाओं से प्रतिस्थापित करने के कई प्रयास दीर्घकाल से असफल रहे हैं ।

(i) <u>सिफारिशें :</u>

(i) अतः यह सिफारिश की जाती है कि उच्च न्यायालयों और उच्चतम न्यायालय को अंग्रेजी में अपने निर्णय देना जारी रखना चाहिए । जब कभी कोई विशिष्ट निर्णय हिंदी में आदेश पारित करने के लिए अपेक्षित होता है तो उस निर्णय का हिंदी में अनुवाद किया जा सकता है ।

(ii) बड़ी संख्या में मामलों में निर्णयों के हिंदी भाषा में होने की कोई आवश्यकता नहीं है । ऐसे विनिर्दिष्ट उदाहरणों का कोई विश्लेषण नहीं हुआ है जहां अंग्रेजी में निर्णयों ने सरकार के कृत्यकरण में गंभीर बाधा डाली है । जब तक कि कोई वैज्ञानिक अध्ययन नहीं किया जाता है, ऐसी सिफारिश को कार्यान्वित नहीं किया जाना चाहिए ।"

श्री सी. लक्ष्मी नारायणन, अधिवक्ता

"जैसा आपको विदित है मैं मद्रास उच्च न्यायालय में 1956 से विधि व्यवसाय कर रहा हूं और मुझे यह देखकर दुख हुआ है कि विधि कार्य विभाग, विधि और न्याय मंत्रालय ने अपना तारीख 29.3.2006 का पत्र विभिन्न विधायी विभागों को संसदीय राजभाषा समिति की सिफारिश पर उनके विचार जानने के लिए भेजा है ।

"संख्या 16.8(घ) हिंदी में मूल रूप से प्रारूपण करने का कार्य हाथ में लेने के लिए विधायी विभाग को प्रस्तावित करते हुए और 16.8(ङ) 'उच्च न्यायालयों / उच्चतम न्यायालय से ऐसे संशोधन के पश्चात् अपने निर्णयों और डिक्रियों आदि को हिंदी में देना प्रारंभ करने के लिए कहा जाना चाहिए' प्रस्तावित करते हुए संविधान का अनुच्छेद 348 ।

मैं पूर्णतः विरोधी हूं "16.8(ङ) - संविधान के अनुच्छेद 348 के संशोधन के पश्चात्, उच्च न्यायालयों/उच्चतम न्यायालय से अपने निर्णय और डिक्री आदि हिंदी में देना प्रारंभ करने के लिए कहा जाना चाहिए जिससे कि बड़ी संख्या में सरकारी विभाग, जो न्यायिक/अर्ध न्यायिक कृत्य कर रहे हैं, हिंदी में आदेश देने मं समर्थ हो सकें । इस समय ये विभाग हिंदी में आदेश पारित करने में असमर्थ हैं क्योंकि उच्च न्यायालयों/उच्चतम न्यायालय में उनके आदेशों के विरुद्ध अपील को अंग्रेजी में संचालित किया जाना होता है ।"

यदि ऐसे आदेश उच्च न्यायालय और उच्चतम न्यायालय द्वारा हिंदी में पारित किए जाते हैं तो इससे न्याय पद्धति में यर्थाततः अव्यवस्था कारित होगी । भारत ऐसा एक देश है जिसमें कई राज्य हैं, जिनकी अपनी राजभाषा है, और मुकदमा लड़ने वालों पर तथा न्यायालयों पर विशेष रूप से उच्च न्यायालयों और उच्चतम न्यायालय पर, हिंदी अधिरोपित करना अवांछनीय है और इससे गैर-हिंदी राज्यों में मुकदमा लड़ने वालों और न्यायालयों को बड़ी हानि कारित होगी । सरकार के परिसंघीय तंत्र में प्रत्येक राज्य के अधिकारों और सुविधाओं का आदर किया जाना होता है और उनका ध्यान रखा जाना होता है ।

यद्यपि इन राज्यों में जिला न्यायालय के स्तर तक विधिक कार्यवाहियां, जिनके अंतर्गत निर्णय हैं, उनकी स्थानीय भाषाओं में की जाती हैं, उच्च न्यायालयों और उच्चतम न्यायालय के समक्ष कार्यवाहियां अंग्रेजी भाषा में की जाती हैं, जो कि मुकदमा लड़ने वाली जनता के लिए और उन मामलों पर बहस करने वाले अधिवक्ताओं के लिए अत्यधिक सुविधाजनक है । अंग्रेजी सार्वभौमिक भाषा होने के कारण अंग्रेजी में उच्च न्यायालयों और उच्चतम न्यायालय में निर्णय अत्यधिक महत्व के होते हैं । यद्यपि हिंदी को राष्ट्रभाषा घोषित किया गया है किंतु सभी अन्य भाषाओं को महत्व दिया गया है और उन्हें हिंदी से निम्न रूप में नहीं सोचा जा सकता । यह केवल मामलों की छोटी सी प्रतिशतता है जो उच्च न्यायालयों और उच्चतम न्यायालय में, निम्नतर स्तर पर लाखों मामलों की तुलना में, पहुंचती है । इसके अतिरिक्त उच्च न्यायालय और उच्चतम न्यायालय के निर्णय सभी अधीनस्थ न्यायालयों पर आबद्धकर है और निर्णयों को हिंदी में दिए जाने के पश्चात् इससे अन्य राज्यों में, जहां हिंदी राजभाषा नहीं है विध्वंश कारित होगा । मैं अनुवाद के लिए अत्यधिक व्यय अंतर्वलित करूंगा और निर्णय देने में विलंब कारित करूंगा और इस प्रकार शीघ्र न्याय के लिए मुकदमा लड़ने वाले के आधिकारों को नकारात्मक कर दूंगा । उच्च न्यायालयों और उच्चतम न्यायालय में अंग्रेजी में निर्णय दिए जाने की वर्तमान पद्धति मुकदमा लड़ने वाली जनता के हित में और गैर हिंदी भाषी राज्यों से आने वाले अधिवक्ताओं के हित में अत्यधिक उपयुक्त है । इसके अतिरिक्त वर्तमान पद्धति जिसमें उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायमूर्ति का पद भिन्न न्यायालय के, विशेष रूप से गैर हिंदी प्रदेश के वरिष्ठ न्यायाधीश द्वारा धारित किया जाता है, ऐसी नियुक्ति धारण करने वालों के लिए बड़ी कठिनाई कारित करेगी ।

इसके अतिरिक्त इस प्रकार की सिफारिश भारत में ऐसे विभिन्न राज्यों के बीच दुर्भावना को सृजित करेगी जिनकी प्रशासन के लिए अपनी भाषा है और उन भूले हुए हिंदी विरोधी आंदोलनों को प्रत्यावर्तित कर देगी, जो भारत जैसे परिसंघीय देश के लिए हितकर

नहीं है ।

मैं श्रीमान आपसे अनुरोध करता हूं कि कृपया देश की एकता के हित में प्रस्तावित संशोधन को अस्वीकार कर दें ।

संविधान का अनुच्छेद 348 निम्नलिखित रूप में है :

''**धारा 348. उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों में और अधिनियमों, विधेयकों आदि के लिए प्रयोग की जाने वाली भाषा** - (1) इस भाग के पूर्वगामी उपबंधों में किसी बात के होते हुए भी, जब तक संसद विधि द्वारा अन्यथा उपबंध न करे तब तक -

(क) उच्चतम न्यायालय और प्रत्येक उच्च न्यायालय में सभी कार्यवाहियां अंग्रेजी भाषा में होंगी,

(ख) (i) संसद के प्रत्येक सदन या किसी राज्य के विधान-मंडल के सदन या प्रत्येक सदन में पुरःस्थापित किए जाने वाले सभी विधेयकों या प्रस्तावित किए जाने वाले उनके संशोधनों के,

(ii) संसद या किसी राज्य के विधान-मंडल द्वारा पारित सभी अधिनियमों के और राष्ट्रपति या किसी राज्य के राज्यपाल द्वारा प्रख्यापित सभी अध्यादेशों के, और

(iii) इस संविधान के अधीन अथवा संसद या कियी राज्य के विधान-मंडल द्वारा बनाई गई किसी विधि के अधीन निकाले गए या बनाए गए सभी आदेशों, नियमों, विनियमों और उपविधियों के,

प्राधिकृत पाठ अंग्रेजी भाषा में होंगे ।

(2) खंड (1) के उपखंड (ख) में किसी बात के होते हुए भी, किसी राज्य का राज्यपाल राष्ट्रपति की पूर्व सहमति से उस उच्च न्यायालय की कार्यवाहियों में, जिसका

मुख्य स्थान उस राज्य में है, हिंदी भाषा का या उस राज्य के शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग होने वाली किसी अन्य भाषा का प्रयोग प्राधिकृत कर सकेगा:

परंतु इस खंड की कोई बात ऐसे उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए किसी निर्णय, डिक्री या आदेश को लागू नहीं होगी ।

(3) खंड (1) के उपखंड (ख) में किसी बात के होते हुए भी, जहां किसी राज्य के विधान-मंडल ने, उस विधान-मंडल में पुरःस्थापित विधेयकों या उसके द्वारा पारित अधिनियमों में अथवा उस राज्य के राज्यपाल द्वारा प्रख्यापित अध्यादेशों में अथवा उस उपखंड के पैरा (iii) में निर्दिष्ट किसी आदेश, नियम, विनियम या उपविधि में प्रयोग के लिए अंग्रेजी भाषा से भिन्न कोई भाषा विहित की है, वहां उस राज्य के राजपत्र में उस राज्य के राज्यपाल के प्राधिकार से प्रकाशित अंग्रेजी भाषा में उसका अनुवाद इस अनुच्छेद के अधीन उसका अंग्रेजी भाषा में प्राधिकृत पाठ समझा जाएगा ।

डा. आर. जी. पाडिया, वरिष्ठ अधिवक्ता

''संसदीय समिति की सिफारिश सं. 16.8(घ) और 16.8(ङ) के बारे में रिपोर्ट

किसी भी देश में, प्रजातंत्र या अन्यथा, भाषा अपनी जनता के लिए न केवल भावनात्मक रूप से किंतु सोचने और साथ ही दूसरों के साथ बातचीत करने की प्रक्रिया के बहुत शक्तिशाली साधन के रूप में बड़े महत्व का माध्यम है । तथापि किसी प्रजातंत्र में उसका महत्व विशेष रूप से महत्वपूर्ण हो जाता है क्योंकि किसी प्रजातंत्र में प्रत्येक नागरिक को प्रदत्त मूल अधिकारों में से एक किसी प्रकार किसी रीति से वाक् और अभिव्यक्ति की, जो कोई नागरिक प्रकट करने की वांछा करता है, स्वतंत्रता है । उन प्रजातंत्रों में, जो परिसंघवाद की संकल्पना पर आधारित हैं इसकी भूमिका और अधिक महत्वपूर्ण हो जाती है क्योंकि वहां विभिन्न प्रादेशिक अस्तित्वों की जनता के भटके हुए और विभिन्न विचार होते हैं और उनके विरोधी दावों का विभिन्न क्षेत्रों में, जिनके अंतर्गत भाषा

भी है, निपटारा किया जाना होता है । परिसंघवाद दिए जाने के लिए अपनी कीमत की मांग करता है और ऐसे सुसंगत तथ्यों में से एक सामान्य भाषा की मान्यता और उसके उपयोग के संबंध में सहमति प्राप्त करने की समस्या होती है । परिसंघीय संविधान में विभिन्न राज्यों में राजनैतिक संरचना पूर्ण रूप से भिन्न प्रकार की हो सकती है अर्थात् एक क्षेत्र अपनी राजनीतिक संस्थाओं, उदार प्रजातंत्र की संकल्पना का चयन कर सकता है जबकि दूसरा मार्क्सवाद पर आधारित सिद्धांतों का चयन कर सकता है और फिर भी एक दूसरा क्षेत्र किसी विशिष्ट धार्मिक विश्वास पर आधारित पद्धति का और उससे प्रकट होने वाली नीतियों का चयन कर सकता है । ऐसे विभिन्न क्षेत्रों की जनसंख्याओं की अपनी सुभिन्न भाषा, बोली जाने वाली साथ ही लिखी जाने वाली, हो सकती है । इस प्रकार वहां न केवल दोहरी भाषा का मामला हो सकता है बल्कि, वास्तव में, बहुभाषा का मामला भी हो सकता है, और ऐसे विरोधी हितों का संतुलन करना बहुत बड़ा कठिन कार्य है । अनुभव ने हमें सिखाया है कि भारत में जहां बहुत अधिक जनसंख्या है और 28 राज्य तथा 7 संघ राज्य क्षेत्र हैं, ऐसा कोमल संतुलन बनाए रखने का कार्य अधिक कठिन है । महान लेखक, ग्रेनविले ऑस्टिन ने अपनी उत्कृष्ट कृति 'भारतीय संविधान - किसी राष्ट्र की आधारशिला' में ठीक ही कहा है कि वह हल जो संविधान सभा में बड़े विचार-विमर्श के पश्चात् विकसित किया गया है वह आधे मन से किया गया समझौता है ।

2. संविधान का ही प्रारूपण करते समय देश में अपनाई जाने वाली भाषा के प्रश्न पर गहन विचार-विमर्श हुआ था और तीन तारीखों अर्थात् 12 सितंबर, 1949, 13 सितंबर, 1949 और 14 सितंबर, 1949 की कार्यवाहियां पृष्ठ 1314 से पृष्ठ 1491 पर अर्थात् 175 पृष्ठों से अधिक पर संविधान सभा के विचार-विमर्श के वॉल्यूम सं. -I । पुस्तक संख्या 4 में सम्यक रूप से रिपोर्ट की गई है और केवल उसके पश्चात् नए भाग 14-क को जिसमें अनुच्छेद 301-क से अनुच्छेद 301-ञ तक अंतर्विष्ट हैं, सम्यक् रूप से संविधान सभा के सदस्यों द्वारा स्वीकार और अंगीकार किया गया था ।

3. यह याद करना बहुत महत्वपूर्ण है कि उद्देशिका को अंगीकृत करते समय, अन्य बातों के साथ, राष्ट्र की एकता की गंभीरतापूर्वक उद्घोषणा की गई थी और इस प्रकार संस्थापक निर्माताओं के मस्तिष्क में देश के लिए बड़ा उद्देश्य था अर्थात् देश की एकता को भाषा के मुद्दे के ऊपर पूर्ण सहमति प्राप्त करने में गंभीर कठिनाइयों के बावजूद बनाये रखना । इस पर ध्यान देना भी महत्वपूर्ण है कि जबकि उद्देशिका विभिन्न मौलिक संकल्पनाओं, जैसे न्याय, स्वतंत्रता, समानता और भ्रातृत्व पर अधिक जोर देती है, वह भाषा के प्रति कोई भी निर्देश नहीं करती है किंतु वह अंतिम उद्देश्य के प्रति निर्देश करती है और वह राष्ट्र की एकता है ।

4. भारतीय संविधान के अधीन अनुच्छेद 343 में, संघ की राजभाषा देवनागरी लिपि में हिंदी घोषित की गई है किंतु उसी अनुच्छेद में यह भी उपबंधित किया गया है कि संविधान के प्रारंभ से 15 वर्ष की कालावधि के लिए, अंग्रेजी भाषा संघ के सभी शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग की जाती रहेगी ।

5. इस संबंध में वास्तव में बोलते हुए, यह आवश्यक नहीं है कि उस अत्यधिक कठिन राजनीतिक स्थिति को याद किया जाए, जो वर्ष 1965 में, विशेष रूप से दक्षिण भारत में जब अंग्रेजी भाषा को अधीनस्थ स्थिति देनी चाही गई थी, प्रकट हुई थी और वे घटनाएं सुविदित हैं जिनके कारण यथावत स्थिति को संविधान के अधीन, जो आज तक है, बनाए रखे जाने की अनुज्ञा दी गई थी ।

6. मैं इस संबंध में संविधान के एक महत्वपूर्ण लक्षण को जोड़ना चाहूंगा और वह यह कि भाषा का प्रश्न भाग 4 अर्थात् राज्य की नीति के निदेशक तत्वों में अंतर्विष्ट नहीं है । यद्यपि अनुच्छेद 37 के अधीन निदेशक तत्वों का देश के शासन में मूलभूत होना घोषित किया गया है और राज्य पर विधि बनाने में इन सिद्धांतों को लागू करने का कर्तव्य अधिरोपित किया गया है किंतु वह आदेश है जहां तक भाषा का संबंध है, अपनी अनुपस्थिति से सुप्रकट है । तथापि यह स्वीकार किया जाना चाहिए कि विभिन्न नीति

निदेशक तत्वों का कार्यान्वयन बहुत धीमा रहा है जैसे अनिवार्य और निःशुल्क प्रारंभिक शिक्षा से संबंधित अनुच्छेद 45 और कतिपय नीति निदेशक तत्वों के संबंध में, जैसे अनुच्छेद 44 के अधीन समान सिविल संहिता के संबंध में, अभी तक कोई प्रगति नहीं हुई है । वह मुद्दा जिस पर मैं जोर देना चाहता हूं यह है कि नीति निदेशक तत्वों के समान जो देश के शासन में मूलभूत है हमारे देश का सामना कर रही भाषा की समस्या के लिए समझौता सूत्र प्राप्त करने में सहमति विकसित करने में पर्याप्त समय लगने की संभावना है किंतु विलंब को संवैधानिक उपबंधों के कार्यान्वयन के लिए बहुत चौंकाने वाला या विनाशकारी नहीं माना जाना चाहिए ।

7. इस पर बहुत जोर दिया जाना चाहिए कि भाषा किसी देश में राष्ट्रीय एकीकरण के लिए बहुत महत्वपूर्ण शक्ति है किंतु दूसरी ओर वह राष्ट्र के विघटन के लिए भी एक बहुत प्रभावकारी शक्ति है । वास्तव में कार्यरत और क्रियाशील समाज में, पर्याप्त संख्या में समाज की जनता की इच्छा के विरुद्ध कुछ अधिरोपित करने का प्रयास नहीं किया जाना चाहिए और कोई ऐसा अधिरोपण, भाषा के संबंध में भी, हानिकर हो सकता है, विशेष रूप से जब इस मुद्दे में भावनात्मक उद्वेगों को जागृत करने के लिए बड़ा प्रभावकारी साधन अंतर्वलित है । बहुत लंबे समय में जनता के मस्तिष्क की मनोवृत्ति और आचार-विचार में एक वातावरण का सृजन करना होगा जो जनता के अपने और साथ ही समस्त जनता के कल्याण के लिए एकरूप भाषा अंगीकार करने की दिशा में आगे बढ़ने के लिए हो । किसी राष्ट्र में किसी भाषा का विकास और उन्नति बहुत धीरे होती है और इस प्रक्रिया में किसी कृत्रिम खालीपन का सृजन करके किसी विशिष्ट भाषा के अधिरोपण से एकाएक बाधा नहीं डाली जा सकती है । मुझे अवश्य स्वीकार करना चाहिए कि शासकीय रूप से घोषित संघ की भाषा अर्थात् हिंदी की उन्नति के लिए हमारे प्रयासों को पूर्ण रूप से और समाधानप्रद रूप में वास्तविकता प्रदान नहीं की गई है किंतु क्षति-पूर्ति करने वाला लक्षण यह है कि इसके कोई गंभीर विरोधी परिणाम नहीं है । कनाडा जैसे देश के प्रति, जहां दो घोषित

राजभाषाएं अर्थात् अंग्रेजी और फ्रेंच है या बहुत छोटे देश जैसे स्विटजरलैंड के प्रति, जहां तीन घोषित राजभाषाएं अर्थात् अंग्रेजी, फ्रेंच और इटेलियन है, निर्देश किया जा सकता है। आधारभूत रूप से महत्वपूर्ण तत्वों में से एक भाषा की स्वयं की आंतरिक और प्रकट शक्ति है जो उसकी गुणवत्ता और विकास की गति पर निर्भर है और एक बार उसका, उसकी शब्दावली और उसके उपयोग की दृष्टि से, इस प्रकार विकास हो जाता है तो वह स्वयं जनता को उसके साधारण उपयोग के द्वारा हल प्रदान करती है और यह पहलू मौलिक है।

8. यह भी इंगित किया जा सकता है कि हमारे अपने संविधान के अधीन अनुसूची आठ में, इस समय, हमारी 22 मान्यता प्राप्त भाषाएं हैं और इससे पृथक अनुच्छेद 347 के अधीन एक ऐसा उपबंध भी है कि किसी विशेष राज्य में यदि कोई अन्य भाषा हो, जिसका उस राज्य की जनता के बड़े भाग द्वारा प्रयोग किया जा रहा हो और संबंधित राज्य द्वारा उनकी ओर से कोई मांग की जाए तो ऐसी अन्य भाषा को भी राष्ट्रपति द्वारा उस राज्य की राजभाषा के रूप में मान्यता दी जा सकती है।

9. हिंदी भाषा की शब्दावली को सुदृढ़ करने के लिए, जो मुख्यतः संस्कृत पर और गौणतः अन्य भाषाओं पर आधारित हो, अनुच्छेद 351 के अधीन अंतर्विष्ट आदेश को अभी पूरा किया जाना है और हमने अनुसूची आठ में अंतर्विष्ट सभी अन्य 22 भाषाओं के बहुत बड़ी संख्या में सामान्य रूप से उपयोग किए जाने वाले शब्दों को सम्मिलित करके हिंदी भाषा को संमृद्ध नहीं किया है। अन्य भाषाओं के अन्य शब्दों का हिंदी के भाग के रूप में यह संमिश्रण वास्तव में संपूर्ण देश में हिंदी की उन्नति, विकास और प्रयोग के लिए बहुत महत्वपूर्ण है और यह आदेश प्रभावी रूप से और शीघ्र भी कार्यान्वित किया जाना है।

अब मैं दो विनिर्दिष्ट प्रश्नों पर आता हूं। प्रथम सिफारिश का जहां तक संबंध है, वह सिफारिश सं. 16.8 (घ) है :

10. अनुच्छेद 348 का खंड (1) नीचे उद्धृत किया जाता है :

''इस भाग के पूर्वगामी उपबंधों में किसी बात के होते हुए भी, जब तक संसद विधि द्वारा अन्यथा उपबंध न करे तब तक -

(क) उच्चतम न्यायालय और प्रत्येक उच्च न्यायालय में सभी कार्यवाहियां अंग्रेजी भाषा में होंगी,

(ख) (i) संसद के प्रत्येक सदन या किसी राज्य के विधान-मंडल के सदन या प्रत्येक सदन में पुरःस्थापित किए जाने वाले सभी विधेयकों या प्रस्तावित किए जाने वाले उनके संशोधनों के,

(ii) संसद या किसी राज्य के विधान-मंडल द्वारा पारित सभी अधिनियमों के और राष्ट्रपति या किसी राज्य के राज्यपाल द्वारा प्रख्यापित सभी अध्यादेशों के, और

(iii) इस संविधान के अधीन अथवा संसद या किसी राज्य के विधान-मंडल द्वारा बनाई गई किसी विधि के अधीन निकाले गए या बनाए गए सभी आदेशों, नियमों, विनियमों और उपविधियों के,

प्राधिकृत पाठ अंग्रेजी भाषा में होंगे । ''

11. उक्त अनुच्छेद के खंड (2) के अधीन किसी राज्य का राज्यपाल राष्ट्रपति की पूर्व सहमति से उस राज्य के शासकीय प्रयोजनों के लिए या संबंधित उच्च न्यायालय में कार्यवाहियों में हिंदी भाषा का या किसी अन्य भाषा का प्रयोग प्राधिकृत कर सकेगा । उक्त अनुच्छेद का खंड (3) उपबंध करता है कि जहां किसी राज्य में विधान-मंडल ने, उस विधान मंडल में पुरःस्थापित किए जा रहे विधेयकों या पारित अधिनियमों में या उस राज्य के राज्यपाल द्वारा प्रख्यापित अध्यादेशों में या राज्य में बनाए गए किसी अन्य अधीनस्थ विधान में प्रयोग के लिए अंग्रेजी भाषा से भिन्न कोई भाषा विहित की है, वहां उस राज्य

के राजपत्र में अंग्रेजी भाषा में उसका अनुवाद भी प्रकाशित किया जाएगा और उसे अंग्रेजी भाषा में उसका प्राधिकृत पाठ समझा जाएगा ।

12. पूर्वोक्त उपबंधों का विश्लेषण स्पष्ट रूप से दर्शित करता है कि वह सर्वोपरि खंड, अर्थात् उस सब का ध्यान रखे बिना, जो अनुच्छेद 343, 344, 345, 346 और 347 के अधीन कहा गया है, प्रारंभ होता है । इस प्रकार दूसरे शब्दों में, इस अनुच्छेद को प्रधान महत्व दिया गया है ।

13. इस अनुच्छेद के खंड (1) का अत्यधिक महत्वपूर्ण भाग ''जब तक संसद विधि द्वारा अन्यथा उपबंध न करे'' है । इस प्रकार संपूर्ण अनुच्छेद इस उपधारण पर आधारित है कि इसके विरुद्ध किसी बात का विधि द्वारा संसद द्वारा उपबंध किया जा सकता है । यह भी स्पष्ट है कि संसद के लिए किसी विशेष बहुमत का उपबंध नहीं किया गया है, और, वास्तव में संसद द्वारा बनाई गई कोई साधारण विधि इस अनुच्छेद के तीनों खंडों के सभी उपबंधों का अतिक्रमण कर देगी । इस प्रकार संसद को अनुच्छेद के अधीन अधिभावी अधिकार दिए गए हैं ।

14. जैसा ऊपर कहा गया है उक्त अनुच्छेद की स्कीम की दृष्टि से मेरी सुविचारित राय में विधायी विभाग को हिंदी में मूल रूप से प्रारूपण करने का कार्य हाथ में लेने में समर्थ बनाने के लिए अनुच्छेद 348 का संशोधन करने की पूर्ण रूप से कोई आवश्यकता नहीं है । वास्तव में विधायी विभाग संसद का अधीनस्थ खंड है और इस प्रकार संविधान का संशोधन किए बिना भी वांछित परिणाम प्राप्त किए जा सकते हैं । तथापि क्या संसद को भी ऐसी कोई क्रिया करनी चाहिए पूर्णतया एक भिन्न विषय है और उस बारे में मैंने अपनी रिपोर्ट के पूर्ववर्ती भाग में पहले ही अपने निवेदन कर दिए हैं, जिन्हें कृपया ध्यानपूर्वक देखा जा सकता है ।

15. इसके अतिरिक्त हमारी राजनीतिक पद्धति ब्रिटिश मंत्रिमंडलीय सरकार के माडल

पर आधारित है अर्थात् सरकार के दोनों खंडों - विधानमंडल और कार्यपालिका - के बीच पूर्ण सामंजस्य है । यह स्वीकार किए बिना कल्पना करते हुए कि विधायी विभाग कार्यपालिका खंड से संबंधित है इससे कोई भी कठिनाई प्रस्तुत नहीं होती है क्योंकि कार्यपालिका संसद से अनुच्छेद 348 के अधीन ऐसी कोई विधि बनाने के लिए सिफारिश कर सकती है और मंत्रिमंडल की सलाह राष्ट्रपति पर आबद्धकर होगी और उक्त सलाह के आधार पर संसद को एक विधि बनानी होगी । इस प्रकार यह कल्पना भी आशयित विधि बनाने के लिए संसद के लिए किसी बंधन का सृजन नहीं करती है ।

16. भाग 17 के अधीन अंतर्विष्ट विभिन्न अनुच्छेदों अर्थात् राजभाषा को नजदीक से देखने पर यह स्पष्ट रूप से प्रकट होता है कि संसद की पूर्वोक्त शक्ति उक्त भाग के किसी अन्य पश्चात्वर्ती अनुच्छेद द्वारा परिस्थिति आबद्ध नहीं है ।

जहां तक संसदीय समिति की सिफारिशों में से सिफारिश सं. 16.8(ङ) का संबंध है, मेरा सादर निवेदन यथा निम्नलिखित है :

17. उक्त सिफारिश का मौलिक तत्व, वास्तव में अस्तित्वहीन है जैसा कि ऊपर प्रस्तुत किया गया है, अनुच्छेद 348 समिति द्वारा उसकी सिफारिश 16.8(ङ) के अधीन प्रस्ताव किए गए रूप में किसी संशोधन की अपेक्षा नहीं करता है ।

18. वर्तमान रिपोर्ट की मेरी प्रस्तावना में, मैंने भाषा के महत्व और साथ ही इस तथ्य पर कि अंग्रेजी भाषा 1950 से उसी भूमिका और हैसियत में अब तक सर्वत्र बनी रही है, जोर दिया है ।

19. जैसा ऊपर कहा गया है हम सर्वत्र देश में सामान्य व्यक्ति के प्रयोग तक के लिए अनुच्छेद 351 के अधीन आदेश दिए गए रूप में हिंदी भाषा को समृद्ध करने में समर्थ नहीं हुए हैं । मुझे तुरंत स्वीकार करना चाहिए कि हमने विभिन्न अधिनियमों, पुराने और साथ ही आधुनिक का, हिंदी में अनुवाद करने का कार्य हाथ में लिया हुआ है किंतु अनुवाद की गई

शब्दावली बहुत कार्यकरणीय नहीं है क्योंकि हिंदी भाषा को स्वयं उसके सामान्य प्रयोग के लिए पर्याप्त रूप से समृद्ध नहीं किया गया है । विधियों का केवल पाठ रूप में अनुवाद, पुरानी और साथ ही वर्तमान का, न्यायाधीशों के लिए या वकीलों के लिए, जो न्याय प्रदान करने वाली पद्धति के आवश्यक अंग हैं, निर्णय प्रदान करने के लिए आवश्यक प्रयोजन की पूर्ति नहीं करता है । निर्णय का दिया जाना विधि के उपबंधों के केवल पाठ संबंधी अनुवाद पर निर्भर नहीं करता है किंतु उसमें बहुत से अन्य आवश्यक और एकीकृत संघटक भाग जैसे सभी स्तरों पर, जिन के अंतर्गत अधीनस्थ स्तर है, अभिवचन, साक्ष्य का मूल्यांकन, न्यायालय की क्रम परम्परा में बहस की प्रभावोत्पादकता और शक्ति अंतर्विष्ट हैं । मेरी व्यक्तिगत राय में विभिन्न उच्च न्यायालयों और उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश पर्याप्त रूप से अंग्रेजी भाषा के प्रयोग से पूर्ण सुपरिचित हैं और यह अवश्य याद रखा जाना चाहिए कि उच्च न्यायालय या उच्चतम न्यायालय में कोई निर्णय प्रदान करने की प्रक्रिया यांत्रिक प्रक्रिया नहीं है । उच्च न्यायालयों तथा उच्चतम न्यायालय में वकीलों और न्यायाधीशों द्वारा आज अंग्रेजी भाषा बहुत अच्छी तरह लिखी जाती है, बोली जाती है और समझी जाती है और मेरे सुविचारित दृष्टिकोण से न्याय परिदान करने की पद्धति में अंग्रेजी भाषा के निरंतर प्रयोग के लिए उनके बीच पूर्ण सहमति होने की संभावना है ।

20. इस समय उच्चतम न्यायालय में कार्यकारी पद्धति में अभिवचनों, साक्ष्य और प्राधिकारियों तथा निचले न्यायालयों के निर्णयों का अंग्रेजी अनुवाद प्रस्तुत करना समाविष्ट है और यह उच्चतम न्यायालय को अपना निर्णय देने में सुविधा प्रदान करता है । हमारे संविधान के अधीन यह उच्चतम न्यायालय है और उच्च न्यायालय हैं जो महत्व का अद्वितीय भाव रखते हैं और न कि विभागीय प्राधिकारी जो अर्ध न्यायिक अधिकरणों के रूप में कार्य कर रहे हैं । वस्तुओं की संवैधानिक स्कीम के अधीन न्यायपालिका की स्वतंत्रता में आधारभूत रूप से उच्च न्यायालयों और उच्चतम न्यायालय की स्वतंत्रता समाविष्ट है और न कि किसी अर्ध न्यायिक प्राधिकारी या अधिकरण की । इसके अतिरिक्त यह अर्ध

न्यायिक अधिकरण या किसी सरकारी प्राधिकारी या सरकारी विभाग का निर्णय है जो भारतीय संविधान के अधीन न्यायिक पुनर्विलोकन के अधीन है और इसके विपर्ययेन नहीं । इस प्रकार अंततोगत्वा प्राधिकारी ये विभाग या प्राधिकारी नहीं हैं किंतु उच्चतर न्यायालय हैं । अतः मेरे विचार में सुझाव ठीक विपरीत होना चाहिए अर्थात् इन सरकारी विभागों को जो न्यायिक/अर्ध न्यायिक कृत्य कर रहे हैं; उनकी पसंद की भाषा में उच्चतम न्यायालय या उच्च न्यायालयों द्वारा दिए गए निर्णयों का प्राधिकृत पाठ/ अनुवाद उनको दिया जाना चाहिए । यह संबंधित सरकार के लिए है कि वह ऐसे प्राधिकृत अनुवादों के लिए, विशेष रूप से उस प्रकार की भाषा में जो ये प्राधिकारी समझ सकें और तत्पश्चात् उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों के निर्णयों के गुणागुण और प्रभाव को समझने में समर्थ हो सकें, तंत्र का विकास करे । यदि किसी तरह वे निर्णयों के अनुवादित पाठ को समझने में असमर्थ हैं तो उनके निर्णयों को हमेशा उच्च न्यायालयों और उच्चतर न्यायालय द्वारा शुद्ध किया जा सकता है और हमारे संविधान के अधीन वस्तुओं की यही स्कीम है ।

21. यह याद रखा जाना चाहिए कि उच्चतम न्यायालय या उच्च न्यायालयों के किसी निर्णय का कृत्य केवल यह नहीं है कि वह संबंधित पक्षकारों पर या सभी अन्य पर भी आबद्धकर बल रखता है, इन न्यायालयों द्वारा भूमि की विधि की घोषणा करता है किंतु आधारभूत रूप से वह उस विधि के प्रख्यापन के रूप में कृत्य करता है जो संपूर्ण देश में सभी जनता के संबंधों को, उनके भावी संबंधों में और उस संबंध में जिन पर उनका वाद विनिश्चित किया गया है, शासित करने के लिए लागू है । इस प्रकार यह अत्यधिक महत्व का है तथा विधि के शासन को सुदृढ़ करने के लिए और लोक हित की अभिवृद्धि के लिए यह है कि किसी निर्णय के मूल्यमुखी प्रभाव पर भाषा के विवाद द्वारा अनावश्यक प्रभाव नहीं पड़ना चाहिए ।

22. मेरी सुविचारित राय में सिफारिश पर अत्यधिक गंभीर आपत्ति संविधान की आधारभूत संरचना के अतिक्रमण के सिद्धांत पर आधारित होगी । उच्चतम न्यायालय और

उच्च न्यायालयों द्वारा न्याय प्रदान करने वाली पद्धति संविधान की आधारभूत संरचना है और इसमें आवश्यक रूप से उस विशिष्ट न्यायालय द्वारा उस निर्णय को देने की रीति, उसका ढंग और उसकी अभिव्यक्ति सम्मिलित हैं । किसी भी प्रकार का कोई भाषा संबंधी अधिरोपण उच्चतम न्यायालय या उच्च न्यायालयों के किसी न्यायाधीश पर अंग्रेजी में निर्णय न देने के लिए उसको बाध्यकर करने वाला नहीं किया जा सकता । भाषा, चाहे हिंदी हो या अंग्रेजी, का प्रयोग हमारे संविधान की मौलिक संरचना का आधारभूत लक्षण या भाग नहीं है किंतु न्यायिक पुनर्विलोकन की संकल्पना अवश्य ऐसा एक भाग है, इस पहलू पर अधिक जोर नहीं दिया जा सकता और उसे सदैव ध्यान में रखा जाना है । किसी भी प्रकार मेरी सुविचारित राय में कोई भी अंतिम विनिश्चय किए जाने के पूर्व न्यायालयों के, जिनके अंतर्गत उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश भी सम्मिलित हैं, विचारों को इन सिफारिशों को कार्यान्वित करने की दिशा में कोई कार्रवाई किए जाने के पूर्व अवश्य प्राप्त किया जाना चाहिए । यह विशेष रूप से ऐसा है क्योंकि किसी चक्रदार मार्ग से सिफारिश उच्च न्यायालयों तथा उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों पर हिंदी का अध्ययन, ज्ञान और प्रयोग भी अधिरोपित करती है । आगे उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों के संबंध में स्थानांतरण नीति को अंतिम रूप से छोड़ा नहीं गया है और तथ्यतः वह मुख्य न्यायमूर्ति के स्थानांतरण के संबंध में पूर्ण रूप से लागू है । वह सामान्यतः थोड़े समय के लिए रहता है और वह बने रहने के दौरान पहले से ही अपने स्थानांतरित राज्य की भाषा को समझने और उसका प्रयोग करने के लिए बाध्य होता है ।

23. इसके अतिरिक्त यह सामान्य ज्ञान है कि हमारा भारतीय उच्चतम न्यायालय विभिन्न विदेशी न्यायालयों द्वारा परिदत्त निर्णयों का उपयोग करता है और विपर्ययेन भी है । हमारे न्यायालयों द्वारा परिदत्त किए गए निर्णय विभिन्न देशों के न्यायालयों द्वारा संपूर्ण विश्व में अधिकारिक रूप से निर्दिष्ट किए जा रहे हैं और उन पर भरोसा किया जा रहा है । यह सामान्य ज्ञान है कि सब मिलाकर, अंग्रेजी ऐसी भाषा है, जिसका प्रजातांत्रिक संसार में

न्याय प्रदान करने में विश्व में सर्वत्र उपयोग किया जाता है और ऐसा कुछ नहीं किया जाना चाहिए जो सर्वत्र विश्व में अन्य न्यायालयों द्वारा प्रयोग किए जाने वाले हमारे निर्णयों की सुसंगतता और प्रभाविता पर प्रभाव डाले । हमारे न्यायालयों के, विशेष रूप से उच्चतम न्यायालय के, निर्णयों के अंतरराष्ट्रीय मूल्य और उपयोगिता को नीची दृष्टि से देखे जाने के लिए कुछ नहीं किया जाना चाहिए । आगे आज का युग वैश्वीकरण का है और व्यापार और वाणिज्य का असीमित विकास हो रहा है, सीमा शुल्क और उत्पाद शुल्क के संबंध में सामान्य सार्वभौमिक नीतियां बनाने, व्यापार बंधनों को हटाने और एकरूप विनिधान नीतियां बनाने के प्रयास किए जा रहे हैं । अधिक विशिष्ट रूप से माध्यस्थम की तेजी से बढ़ने वाली संकल्पना के प्रति निर्देश अवश्य किया जाना चाहिए जहां मध्यस्थ संसार के विभिन्न देशों के पक्षकारों के ऊंचे हितों से संबंधित विवादों का विनिश्चय करते हैं । ये सभी विषय, जिनके अंतर्गत मध्यस्थों के पंचाट हैं, अंत में न्यायालयों अर्थात् भारत के उच्च न्यायालयों या उच्चतम न्यायालय में बहुत सी स्थितियों में, जो राज्य क्षेत्रीय संक्रियाओं पर निर्भर करती हैं, आते हैं और यह अत्यधिक असाम्यापूर्ण और असंगत होगा कि हमारे न्यायालयों को अपने निर्णय अंग्रेजी में न देने के लिए भारित किया जाए ।

24. यदि न्यायाधीशों को अंग्रेजी में अपने निर्णय न देने के लिए आदेश दिया जाता है तो निर्णयों की क्वालिटी पर गंभीर रूप से और प्रतिकूल रूप से प्रभाव पड़ेगा । निर्णयों को देने के लिए आधारभूत अवसंरचनाओं में से एक अर्थात् विदेशी पाठ्य-पुस्तकों पर और न्यायविदों द्वारा दी गई विदेशी न्यायशास्त्रीय संकल्पनाओं पर भरोसे से हमारे न्यायालय वंचित हो जाएंगे ।

25. अंत में मैं यह और कह सकता हूं कि वर्तमान राजनीतिक स्थिति सिफारिश के कार्यान्वयन के लिए बहुत सहायक नहीं है । भाषा के मुद्दे को राजनीतिक लाभ प्राप्त करने के लिए एक प्रकार की राजनीतिक दुश्मनी के रूप में प्रस्तुत नहीं किया जाना चाहिए । पहले से ही सरकारी प्राधिकारियों के विधायी और कार्यपालक कार्यों के संबंध में उच्च

न्यायालयों और उच्चतम न्यायालय द्वारा न्यायिक पुनर्विलोकन किए जाने के क्षेत्र के संबंध में बहुत बहस चल रही है और यह बहस अभी नियमित अंतरालों पर, बहुधा और उच्च रूप से भावनात्मक रूप से किए जाने पर भी अभी निष्कर्षहीन है । किसी उतावले कार्य का, यद्यपि वह बड़ी गंभीरता से और कठोर राष्ट्रीय भावनाओं के साथ किया गया हो, परिणाम आंदालनों में हो सकता है जिनका सामना यह देश वर्ष 1965 में बहुत पहले ही कर चुका है और अंततोगत्वा उपचार रोग से अधिक खराब हो सकता है ।"

श्री टी. पी. के. नाम्बियार, वरिष्ठ अधिवक्ता

"आदरणीय डा. न्यायमूर्ति लक्ष्मणन,

मुझे 8 अक्तूबर, 2007 का आपका पत्र अनुच्छेद 348 की अव्यवस्था के निर्देश में ऐसे समय पर जब मैं चिंताओं की कमी से चिंतित था, प्राप्त हुआ । आपके प्रश्न की विषय-वस्तु उतनी ही भावनात्मक और महत्वपूर्ण आज है जितनी वह 1949 में थी जब अनुच्छेद 348 का जन्म हुआ था ।

जब कभी मुझे भारत के संविधान में किसी उपबंध से संबंधित किसी पहलू का अध्ययन करना होता है तो मेरा मस्तिष्क तत्संबंधी प्रारूप अनुच्छेद पर संविधान सभा में हुए विचार-विमर्श पर पीछे चला जाता है । संविधान सभा विचार-विमर्श के पृष्ठों को पलटते हुए मैंने पाया कि तत्संबंधी प्रारूप अनुच्छेद पर विचार-विमर्श 12, 13 और 14 सितंबर, 1949 को हुआ था ।

जब संविधान सभा 12 सितंबर, 1949 को 4.00 बजे अपराह्न में पुनः समवेत हुई थी तो श्री राष्ट्रपति (माननीय डा. राजेन्द्र प्रसाद) ने भाग 14-क 'भाषा' का प्रश्न उठाया । डा. राजेन्द्र प्रसाद ने प्रारंभ किया :

"अब हमें भाषा के प्रश्न से संबंधित अनुच्छेदों पर विचार करना है । मैं

जानता हूं कि यह ऐसा विषय है जो कुछ समय से सदस्यों के मस्तिष्क को उद्वेलित कर रहा है । देश के संपूर्ण संविधान में ऐसी कोई अन्य मद नहीं है, जो दिन प्रति दिन घंटा प्रति घंटा, मैं यहां तक कह सकता हूं कि वास्तविक व्यवहार में मिनट प्रति मिनट, कार्यान्वित किए जाने के लिए अपेक्षित होगी .... । मैंने पाया है कि इन अनुच्छेदों के लिए 300 या उससे अधिक संशोधन हैं । यदि संशोधनों में से प्रत्येक को प्रस्तावित किया जाता है तो मैं नहीं जानता हूं कि इसमें कितने घंटे लगेंगे ।''

इस विषय पर इस दिन के मुख्य वक्ता माननीय श्री एन. गोपालास्वामी अयंगर थे । श्री अयंगर ने धमाके से प्रारंभ किया :

> ''इस प्रश्न पर राय हमेशा सर्वसम्मति की नहीं रही है । तथापि एक बात थी जिस पर हम पर्याप्त रूप से सर्वसम्मति से एक निष्कर्ष पर पहुंचे थे कि हमें भारत में संपूर्ण भारत की सामान्य भाषा के रूप में एक भाषा का चयन करना चाहिए, ऐसी भाषा जिसका संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग किया जाना चाहिए ....। मैं किसी एक के लिए आसानी से उस निष्कर्ष पर नहीं पहुंचा जो इन विचार-विमर्शों के अंत में निकला, क्योंकि इसमें उस भाषा (अर्थात्, अंग्रेजी) को अलविदा करना अंतर्वलित था, जिस पर, मैं समझता हूं कि हमने हमारी स्वतंत्रता का निर्माण किया है और उसे प्राप्त किया है । यद्यपि मैंने अंत में इस निष्कर्ष को स्वीकार कर लिया कि उस भाषा को सम्यक अनुक्रम में छोड़ दिया जाना चाहिए और उसके स्थान पर हमें इस देश की भाषा को प्रतिस्थापित करना चाहिए, यह बिना दर्द के नहीं था कि मैं उस विनिश्चय के लिए सहमत हुआ ।''

श्री गोपाला स्वामी अयंगर ये कहते चले गए कि हम एकदम अंग्रेजी भाषा को नहीं छोड़ सकते हैं ''हमें उस समय तक कई वर्षों के लिए अंग्रेजी भाषा को रखना पड़ेगा जब

तक कि हिंदी स्वयं के लिए स्थान नहीं बना लेती है, यह केवल इसलिए नहीं कि यह एक भारतीय भाषा है, किंतु इसलिए भी कि भाषा के रूप में यह उस सब के लिए एक दक्ष उपकरण होगी जो हमें भविष्य में कहना है और करना है और जब तक हिंदी स्वयं को उस स्थिति में स्थापित नहीं कर लेती है जिसमें कि आज अंग्रेजी संघ के प्रयोजनों के लिए स्थापित है।'' श्री अयंगर ने आगे कहा :

''तत्पश्चात् हम उस भाषा के प्रश्न पर विचार करने के लिए आगे बढ़े जो हमारे विधानमंडलों में और देश के उच्चतम न्यायालयों में प्रयोग की जानी चाहिए और हम काफी बहस करने और विचार-विमर्श करने के पश्चात् इस निष्कर्ष पर आए कि जबकि संघ की भाषा 'हिंदी' का वादविवाद, विचार-विमर्श के लिए और इसी प्रकार केंद्रीय विधानमंडल में प्रयोग किया जा सकता है, और जबकि राज्य की भाषा का समान प्रयोजनों के लिए राज्य विधानमंडलों में प्रयोग किया जा सकता है, तब यह हमारे लिए आवश्यक था, यदि हम अपनी विधियों के पाठ और न्यायालयों में उस पाठ के निर्वचन के बारे में वर्तमान समाधानप्रद वस्तुस्थिति को चिर स्थायी बनाने जा रहे हैं, कि अंग्रेजी वह भाषा होनी चाहिए जिसमें विधान, चाहे विधेयकों और अधिनियमों के रूप में या नियमों और आदेशों के रूप में और निर्वचन, उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों द्वारा निर्णयों के रूप में - कई आने वाले वर्षों के लिए अंग्रेजी में होने चाहिए। मैं अपने स्वयं की ओर से समझता हूं कि ऐसा आने वाले बहुत से वर्षों के लिए होगा। यह इसलिए नहीं है कि हम अंग्रेजी भाषा को इन प्रयोजनों के लिए सभी प्रकार से रखना चाहते हैं। यह इसलिए है कि वे भाषाएं जिन्हें, हम संघ के प्रयोजनों के लिए मान्यता दे सकते हैं और वे भाषाएं, जिन्हें हम राज्य के प्रयोजनों के लिए मान्यता दे सकते हैं, उन प्रयोजनों के लिए पर्याप्त रूप से निश्चित नहीं हैं जिन्हें मैंने वर्णित किया है अर्थात् विधियाँ और न्यायालयों द्वारा विधियों का निर्वचन।''

माननीय सदस्य ने लगभग गिड़गिड़ाते हुए समाप्त किया :

''मैं सदन से केवल यह अपील करूंगा कि हमें इस समस्या को शुद्ध रूप से उद्देश्यात्मक दृष्टि से देखना चाहिए । हमें केवल भावनाओं में या एक प्रकार के या दूसरे प्रकार के पुर्नजागरण के प्रति किसी प्रकार की निष्ठा में नहीं बहना चाहिए । हमें इस पर व्यवहार्यता की दृष्टि से देखना है । हमें उस उपकरण को ग्रहण करना है जो हमारे उस कार्य को सर्वोत्तम रूप में करेगा जो हम भविष्य में करना चाहते हैं और मैं इस बात के लिए आपके साथ सहमत हूं महोदय कि यह अत्यधिक दुःखपूर्ण बात होगी, अत्यधिक निराशावादी उदाहरण होगा हमारी असमर्थतता का कि हम इतने महत्वपूर्ण विषय पर किसी सहमत निष्कर्ष पर नहीं पहुंच पाते हैं यदि इस मुद्दे पर हमें सदन को विभाजित करना पड़ता है । मैं आश्वस्त हूं कि सदबुद्धि अभिभावी होगी ।''

मुझे सोचना चाहिए कि इस समय भी वह आशंका, जिसे श्री गोपाला स्वामी अयंगर द्वारा आवाज दी गई थी, समाप्त नहीं हुई है । मेरे अनुसार हम अभी तक उस प्रक्रम पर नहीं पहुंचे हैं जिस पर हिंदी भाषा अंग्रेजी को प्रतिस्थापित कर सके । वह स्थिति जो आज है लंबे समय तक बनाए रखनी होगी । अभी यह समय नहीं है जब संसदीय राजभाषा समिति द्वारा सिफारिश किए गए रूप में संविधान के अनुच्छेद 348 का संशोधन किया जाए । अभी यह समय बिल्कुल नहीं है कि उच्च न्यायालयों/उच्चतम न्यायालय से अपने निर्णय और डिक्रियों को हिंदी में देना प्रारंभ करने के लिए कहा जाए ।

हिंदी भाषा की अब क्या स्थिति है । आज हिंदी में शिक्षा का क्या मानक है । हिंदी कितनी बढ़ी है कि वह समिति की सिफारिशों में अंतर्वलित स्थिति का सामना करने के लिए खड़ी हो सके । मैं इस सुझाव में कोई विद्वतापूर्ण प्रलोभन नहीं पाता हूं । इस सुझाव से सहमत होना बहुत शीघ्रता होगी । प्रश्न विधि के खाली पृष्ठों को भरने से संबंधित नहीं

है । यह प्रश्न भारग्रस्त है । मैं अपनी उलझन के लिए दुख प्रकट करता हूं किंतु मुझे समिति के प्रति विनम्र माफी के साथ यह कहना है कि समिति द्वारा सुझाव गए आधारों पर जल्दी में कोई संशोधन केवल इस कारण से नहीं किया जाना चाहिए कि विधानमंडल/संसद संवैधानिक धैर्यहीनता से कष्ट उठा रहे हैं । एक गलती दूसरे का मार्ग प्रशस्त करती है । "भाषा" के संबंध में संवैधानिक संशोधनों के प्रश्न पर गंभीर रूप से विचार किया जाना चाहिए । विशेष रूप से जब विधान कोई धर्म-पत्र नहीं है और आगे, अंग्रेजी एक लुभावना खजाना है । 1949 में स्थिति उससे भिन्न थी जो 2007 में है । प्रौद्योगिकी ने इस क्लिक करने वाले, क्लिप करने वाले, पर्दे के चौंधियाने वाले संसार में हमारे मस्तिष्कों को परिवर्तित कर दिया है । ये ई-लर्निंग और वैश्वीकरण के दिन हैं । रूस और चीन तक ने भाषा पर अपने विचार बदल दिए हैं । सभी मोर्चों - सामाजिक, राजनीतिक, शैक्षणिक, प्रादेशिक आदि - पर परिवर्तन है । भारत में केवल हिंदी बोलने वाले क्षेत्र नहीं है । संवैधानिक गलियारा हिंदी का परिरक्षित क्षेत्र नहीं है । प्रादेशिक भाषाएं विकसित हुई हैं, वास्तव में अत्यधिक विकसित हुई हैं । यहां भाषा पर आधारित राज्यों के पुनर्गठन ने बड़ी भूमिका निभाई है और यह कि हिंदी भाषा के विरुद्ध निभाई हैं । इन दिनों में अपने निर्णयों को देने वाले संवैधानिक न्यायालयों की स्थिति अकल्पनीय है । उच्च न्यायालयों और उच्चतम न्यायालय द्वारा न्याय के प्रशासन से संबंधित कोई भी व्यक्ति इस सुझाव के प्रति अपना विरोध प्रकट करने के लिए थोड़े संकोच से तैयार हो जाएगा । जब हम संविधान, संगठन तथा उच्च न्यायालयों और उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति की पद्धति की ओर ध्यान देते हैं तो हमें हिंदी में निर्णय देने वाले न्यायाधीशों की विशेष रूप से भाषा की सम्माननीय अज्ञानता वाले न्यायाधीशों की घोर असंभवता देखने में कोई कठिनाई नहीं होगी । संवैधानिक न्यायालयों के निवासियों की शांति भंग नहीं की जानी चाहिए ।

दिन के अंत में मैं केवल एक निष्कर्ष निकाल सकता हूं और वह यह है कि अभी

''भाषा'' के संबंध में, विशेष रूप से संविधान के अनुच्छेद 348 के संबंध में, संसदीय राजभाषा समिति की सिफारिश के आधारों पर कार्य करने का समय नहीं आया है । संविधान के अनुच्छेद 343 में अनुबद्ध पन्द्रह वर्षों की कालावधि का परिवर्तित स्थिति में, जो अब से लंबे समय तक उक्त अनुबंध का पालन करना असंभव बनाती है, कभी भी पालन नहीं किया जा सकता । समय अनुबंध के विरुद्ध परिवर्तित हो गया है । अनुबंध के पक्ष में स्थिति का सुधार नहीं हुआ है । भाषा के प्रश्न पर भूले हुए राजनीतिज्ञों/राजनेताओं की हल्की सिसकियाँ लंबे समय तक बंद नहीं होंगी ।

श्री फाली एस. नारिमन, अध्यक्ष, भारत का विधिज्ञ संगम

''प्रिय डा. न्यायमूर्ति लक्ष्मणन्,

मुझे 30 सितंबर, 2008 का आपका पत्र प्राप्त हुआ ।

2. मैं पुराने फैशन का हो सकता हूं किंतु मैं संसद और भारत सरकार दोनों से आग्रहपूर्वक अनुरोध करूंगा कि वे उस विधिक प्रणाली से छेड़छाड़ न करें जो विद्यमान रही है - मुख्य रूप से क्योंकि भारत में संपूर्ण विधिक पद्धति अंग्रेजी भाषा पर आधारित है और उसमें उसके साथ बहुत कुछ सामान्य है : दोनों का मूल रूप से विदेश से आयात किया गया था । 300 वर्षों के क्रम में, प्रत्येक सुभिन्न रूप से भारतीय हो गई है । एक से अधिक अर्थों में हमारी विधि की भाषा अंग्रेजी है । यह सच है कि अंग्रेजी भाषा जैसी भारत में बोली जाती है और लिखी जाती है उसके वही अक्षर हैं और वह व्याकरण के उन्हीं नियमों के अनुरूप है - किंतु उक्तियां, व्यक्त करने वाले मुहावरे और यहां तक कि शब्दों का उच्चारण भी बहुत भिन्न है । बहुत से नये शब्द आ गए हैं । हमने अंग्रेजी भाषा को संस्थागत और स्थानीयकृत कर दिया है, जैसा कुछ ने कहा है, वह अंग्रेजी हो गई है - ऐसा ही विधिक पद्धति के साथ है । मूल रूप से एंग्लो - सेक्शन जड़ों के साथ अंग्रेजी का रोपण, भारत में विधिक पद्धति का वर्षों में विकास हुआ है, भारतीय मिट्टी में पोषण हुआ

है, इसका देशीकरण हो गया है जो अंग्रेजी ओक (बलुत का पेड़) होने के लिए आशयित थी बड़ी बेतरतीब फैली हुई बरगद के पेड़ में परिवर्तित हो गई है, जिसकी क्रमिक जड़ें नये तने होने के लिए जमीन पर उतर गई हैं ।

3. उस भाषा का परिवर्तन करना जिसमें अधिनियमों का प्रारूपण किया गया है और न्यायालयों से हिंदी में निर्णय देने की अपेक्षा करने की कल्पना करना इस समय असंभव जैसा है - जब तक कि हम अपनी विधिक पद्धति को फेंक नहीं देते हैं और एक नई पद्धति को सहमति से ग्रहण नहीं कर लेते हैं । तब सभी भारतीयों को विधि की नई देशी पद्धति में, जो वास्तव में भारतीय हो (और न कि एंग्लो-सेक्शन), हिंदी में बोलना और सोचना होगा : इसमें बड़ी शल्य क्रिया अपेक्षित है और वर्तमान समय में मैं आग्रहपूर्वक सुझाव दूंगा कि हम इस क्रिया को उस समय तक निलंबित कर दें जब तक भारत वह नहीं हो जाता है जो वह हमेशा होने के लिए तात्पर्यित था : एक एकीकृत, संगठित और शांतिप्रिय नागरिकों का बहुविध समाज ।''

आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय अधिवक्ता संगम : हैदराबाद

''आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय अधिवक्ता संगम ने एक मत होकर संकल्प किया कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 348 का प्रस्तावित संशोधन, जो विधायी विभाग को ''हिंदी में मूलरूप से प्रारूपण करने का कार्य हाथ में लेने के लिए समर्थ बनाने के लिए है, जिससे आशा की जाती है कि माननीय उच्च न्यायालयों और भारत के उच्चतम न्यायालय द्वारा हिंदी में निर्णय देने का मार्ग प्रशस्त होगा, गिरा दिया जाना चाहिए क्योंकि इसके भारतीय समाज की संघीय और बहुविध संरचना और साथ ही राजनीतिक निकाय के लिए अपसकुन सूचक परिणाम होंगे । संगम के सदस्य कठोर रूप से यह अनुभव करते हैं कि विद्यमान व्यवस्था में बाधा डालने का कोई ऐसा प्रयास केवल विस्फोटनकारी प्रवृत्तियों की शक्तियों को सुदृढ़ करेगा । सौभाग्य से न्यायपालिका भाषाविद् उद्धत राष्ट्रवादिता से मुक्त रही है

यद्यपि उसकी उपस्थिति स्वतंत्र भारत की प्रजातांत्रिक संस्थाओं में अन्यत्र अपशकुन सूचक है । वर्तमान कदम ऐसा भानुमती का पिटारा खोल देगा जिससे राष्ट्र में एक सिरे से दूसरे सिरे तक दावों और प्रतिदावों की बहुलता का मार्ग प्रशस्त होगा । ऐसा कदम भारत को दो अदृश्य राष्ट्रों में विभाजित कर देगा ।

संगम के सदस्यों की यह भी राय है कि शेष समाज अंग्रेजी भाषा के व्यापक प्रयोग के कारण सीमा घटाने वाली सूचना प्रौद्योगिकी और विश्व में अन्यत्र होने वाले मस्तिष्क को अचंभे में डालने वाले प्रौद्योगिकी विकास के झंझावतों को अपनाकर उनका लाभ उठाते हुए मुक्ति की ओर तेजी से विकसित हो रहा है ।

संगम के सदस्य आगे अनुभव करते हैं कि अनुच्छेद 348 का संशोधन राजनीति निकाय में प्रतिक्रियावादी शक्तियों को ताकत देगा । इसके अतिरिक्त भारतीय न्यायपालिका विश्व के विचारों से पृथक हो जाएगी । भारतीय न्यायपालिका में सुधार पहले से ही अपेक्षित है जो तभी संभव है जब केवल अंग्रेजी को उच्चतर न्यायपालिका के लिए प्रयोग किए जाने के लिए, विज्ञान और प्रौद्योगिकी में होने वाली प्रोन्नतियों का लाभ उठाने के अलावा, अनुज्ञा दी जाती है ।

यह सोचना भ्रम है कि हिंदी का लाना भारतीय समुदाय के प्रयोजनों की पूर्ति करेगा । संविधान निर्माताओं ने सभी देशी भाषाओं का अपवर्जन करके अंग्रेजी भाषा के लिए संविधान का क्षेत्र उचित रूप से परिरक्षित रखा है ।

आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय अधिवक्ता संगम के सदस्य भारतीय न्यायपालिका और भारत की जनता के वृहत्त हितों में भारत के संविधान के अनुच्छेद 348 के प्रस्तावित संशोधन का विरोध करने के लिए एकमत से संकल्प अंगीकार करते हैं ।"

<u>केरल उच्च न्यायालय अधिवक्ता संगम</u>

''भारत के संविधान के अनुच्छेद 348 के प्रस्तावित संशोधन के बारे में केरल उच्च न्यायालय अधिवक्ता संगम के सदस्यों की राय जानने के लिए अधिवक्ता संगम की साधारण सभा का अधिवेशन 28.1.2008 को संयोजित किया गया । केरल उच्च न्यायालय अधिवक्ता संगम के सदस्य भारत की जनता और भारतीय विधिक पद्धति के वृहत हित में भारत के संविधान के अनुच्छेद 348 के प्रस्तावित संशोधन का विरोध करने के लिए एकमत से संकल्प को अंगीकार करते हैं ।

हम 28.1.2008 को हुए साधारण सभा के अधिवेशन के संकल्प की प्रति इसके साथ संलग्न करते हैं ।

संकल्प

केरल उच्च न्यायालय अधिवक्ता संगम ने एकमत से संकल्प किया कि हिंदी में मूलरूप से प्रारूपण करने का कार्य हाथ में लेने के लिए विधायी विभाग को समर्थ बनाने के लिए भारत के संविधान के अनुच्छेद 348 के प्रस्तावित सभी संशोधन, जिनसे आशा की जाती है कि वे माननीय उच्च न्यायालयों और उच्चतम न्यायालय द्वारा अंग्रेजी भाषा के स्थान पर हिंदी में निर्णय देने के लिए मार्ग प्रशस्त करेंगे, गिरा दिए जाने चाहिए । आगे संगम के सदस्य कठोर रूप से विरोध करते हैं कि संसद या राज्य विधानमंडलों में पुरःस्थापित किए गए विधेयकों और उनके द्वारा पारित अधिनियमों, राष्ट्रपति या राज्यपालों द्वारा प्रख्यापित अध्यादेशों, संविधान के अधीन जारी किए गए सभी आदेशों, नियमों, विनियमों और उपविधियों का मूल प्रारूपण अंग्रेजी के बजाए हिंदी में करने का प्रस्ताव गिरा दिया जाना चाहिए ।

''अनुच्छेद 348 की जटिल स्थिति

(टी. पी. केलु नाम्बियार, वरिष्ठ अधिवक्ता, केरल उच्च न्यायालय द्वारा)

भारत के संविधान का अनुच्छेद 348(1) कहता है :

''इस भाग के पूर्वगामी उपबंधों में किसी बात के होते हुए भी, जब तक संसद विधि द्वारा अन्यथा उपबंध न करे तब तक -

(क) उच्चतम न्यायालय और प्रत्येक उच्च न्यायालय में सभी कार्यवाहियां अंग्रेजी भाषा में होंगी,

(ख) (i) संसद के प्रत्येक सदन या किसी राज्य के विधान-मंडल के सदन या प्रत्येक सदन में पुरःस्थापित किए जाने वाले सभी विधेयकों या प्रस्तावित किए जाने वाले उनके संशोधनों के,

(ii) संसद या किसी राज्य के विधान-मंडल द्वारा पारित सभी अधिनियमों के और राष्ट्रपति या किसी राज्य के राज्यपाल द्वारा प्रख्यापित सभी अध्यादेशों के, और

(iii) इस संविधान के अधीन अथवा संसद या किसी राज्य के विधान-मंडल द्वारा बनाई गई किसी विधि के अधीन निकाले गए या बनाए गए सभी आदेशों, नियमों, विनियमों और उपविधियों के,

प्राधिकृत पाठ अंग्रेजी भाषा में होंगे ।''

यह वह समय था जब मैं चिंताओं की कमी से चिंतित था, मैंने संसदीय राजभाषा समिति की सिफारिश पर ध्यान दिया कि ''संविधान के अनुच्छेद 348 का विधायी विभाग को हिंदी में मूलरुप से प्रारूपण करने का कार्य हाथ में लेने के लिए समर्थ बनाने के लिए संशोधन किया जा सकता है : और ऐसे संशोधन के पश्चात् उच्च न्यायालय/उच्चतम न्यायालय से अपने निर्णय और डिक्रियों आदि को हिंदी में देना प्रारंभ करने के लिए कहा

जाना चाहिए जिससे कि बड़ी संख्या में ऐसे सरकारी विभाग, जो न्यायिक/अर्ध न्यायिक कृत्य कर रहे हैं, हिंदी में आदेश देने के लिए समर्थ हो सकें ; इस समय, ये विभाग हिंदी में आदेश पारित करने में असमर्थ हैं क्योंकि उच्च न्यायालयों/ उच्चतम न्यायालय में उनके आदेशों के विरुद्ध अपील अंग्रेजी में संचालित की जानी होती है ।'' इस सिफारिश की विषय-वस्तु उतनी ही भावनात्मक और महत्वपूर्ण आज है जितनी वह 1949 में थी, जब अनुच्छेद 348 का जन्म हुआ था ।

जब कभी मुझे भारत के संविधान में किसी उपबंध से संबंधित किसी पहलू का अध्ययन करना होता है, तो मेरा मस्तिष्क तत्संबंधी प्रारूप अनुच्छेद पर हुए विचार-विमर्श के लिए संविधान सभा में पीछे चला जाता है । संविधान सभा विचार-विमर्श के पृष्ठों को पलटते हुए मैंने पाया कि तत्संबंधी प्रारूप अनुच्छे पर विचार-विमर्श 12, 13 और 14 सितंबर, 1949 को हुई थी ।.

जब संविधान सभा 12 सितंबर, 1949 को 4.00 बजे अपराह्न में पुनः समवेत हुई थी तो श्री राष्ट्रपति (माननीय डा. राजेन्द्र प्रसाद) ने भाग 14-क 'भाषा' का प्रश्न उठाया । डा. राजेन्द्र प्रसाद ने प्रारंभ किया :

> ''अब हमें भाषा के प्रश्न से संबंधित अनुच्छेदों पर विचार करना है । मैं जानता हूं कि यह ऐसा विषय है जो कुछ समय से सदस्यों के मस्तिष्क को उद्वेलित कर रहा है । देश के संपूर्ण संविधान में ऐसी कोई अन्य मद नहीं है, जो दिन प्रति दिन घंटा प्रति घंटा, मैं यहां तक कह सकता हूं कि वास्तविक व्यवहार में मिनट प्रति मिनट, कार्यान्वित किए जाने के लिए अपेक्षित होगी .... । मैंने पाया है कि इन अनुच्छेदों के लिए 300 या उससे अधिक संशोधन हैं । यदि संशोधनों में से प्रत्येक को प्रस्तावित किया जाता है तो मैं नहीं जानता हूं कि इसमें कितने घंटे लगेंगे ।''

इस विषय पर इस दिन के मुख्य वक्ता माननीय श्री एन. गोपालास्वामी अयंगर थे । श्री अयंगर ने धमाके से प्रारंभ किया :

''इस प्रश्न पर राय हमेशा सर्वसम्मति की नहीं रही है । तथापि एक बात थी जिस पर हम पर्याप्त रूप से सर्वसम्मति से एक निष्कर्ष पर पहुंचे थे कि हमें भारत में संपूर्ण भारत की सामान्य भाषा के रूप में एक भाषा का चयन करना चाहिए, ऐसी भाषा जिसका संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग किया जाना चाहिए ....। मैं किसी एक के लिए आसानी से उस निष्कर्ष पर नहीं पहुंचा जो इन विचार-विमर्शों के अंत में निकला, क्योंकि इसमें उस भाषा (अर्थात्, अंग्रेजी) को अलविदा करना अंतर्वलित था, जिस पर, मैं समझता हूं कि हमने हमारी स्वतंत्रता का निर्माण किया है और उसे प्राप्त किया है । यद्यपि मैंने अंत में इस निष्कर्ष को स्वीकार कर लिया कि उस भाषा को सम्यक अनुक्रम में छोड़ दिया जाना चाहिए और उसके स्थान पर हमें इस देश की भाषा को प्रतिस्थापित करना चाहिए, यह बिना दर्द के नहीं था कि मैं उस विनिश्चय के लिए सहमत हुआ ।''

श्री गोपाला स्वामी अयंगर ये कहते चले गए कि हम एकदम अंग्रेजी भाषा को नहीं छोड़ सकते हैं ''हमें उस समय तक कई वर्षों के लिए अंग्रेजी भाषा को रखना पड़ेगा जब तक कि हिंदी स्वयं के लिए स्थान नहीं बना लेती है, यह केवल इसलिए नहीं कि यह एक भारतीय भाषा है, किंतु इसलिए भी कि भाषा के रूप में यह उस सब के लिए एक दक्ष उपकरण होगी जो हमें भविष्य में कहना है और करना है और जब तक हिंदी स्वयं को उस स्थिति में स्थापित नहीं कर लेती है जिसमें कि आज अंग्रेजी संघ के प्रयोजनों के लिए स्थापित है ।'' श्री अयंगर ने आगे कहा :

''तत्पश्चात् हम उस भाषा के प्रश्न पर विचार करने के लिए आगे बढ़े जो हमारे विधानमंडलों में और देश के उच्चतम न्यायालयों में प्रयोग की जानी चाहिए

और हम काफी बहस करने और विचार-विमर्श करने के पश्चात् इस निष्कर्ष पर आए कि जबकि संघ की भाषा 'हिंदी' का वादविवाद, विचार-विमर्श के लिए और इसी प्रकार केंद्रीय विधानमंडल में प्रयोग किया जा सकता है, और जबकि राज्य की भाषा का समान प्रयोजनों के लिए राज्य विधानमंडलों में प्रयोग किया जा सकता है, तब यह हमारे लिए आवश्यक था, यदि हम अपनी विधियों के पाठ और न्यायालयों में उस पाठ के निर्वचन के बारे में वर्तमान समाधानप्रद वस्तुस्थिति को चिर स्थायी बनाने जा रहे हैं, कि अंग्रेजी वह भाषा होनी चाहिए जिसमें विधान, चाहे विधेयकों और अधिनियमों के रूप में या नियमों और आदेशों के रूप में और निर्वचन, उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों द्वारा निर्णयों के रूप में - कई आने वाले वर्षों के लिए अंग्रेजी में होने चाहिए । मैं अपने स्वयं की ओर से समझता हूं कि ऐसा आने वाले बहुत से वर्षों के लिए होगा । यह इसलिए नहीं है कि हम अंग्रेजी भाषा को इन प्रयोजनों के लिए सभी प्रकार से रखना चाहते हैं । यह इसलिए है कि वे भाषाएं जिन्हें, हम संघ के प्रयोजनों के लिए मान्यता दे सकते हैं और वे भाषाएं, जिन्हें हम राज्य के प्रयोजनों के लिए मान्यता दे सकते हैं, उन प्रयोजनों के लिए पर्याप्त रूप से निश्चित नहीं हैं जिन्हें मैंने वर्णित किया है अर्थात् विधियाँ और न्यायालयों द्वारा विधियों का निर्वचन ।''

माननीय सदस्य ने लगभग गिड़गिड़ाते हुए समाप्त किया :

''मैं सदन से केवल यह अपील करूंगा कि हमें इस समस्या को शुद्ध रूप से उद्देश्यात्मक दृष्टि से देखना चाहिए । हमें केवल भावनाओं में या एक प्रकार के या दूसरे प्रकार के पुर्नजागरण के प्रति किसी प्रकार की निष्ठा में नहीं बहना चाहिए । हमें इस पर व्यवहार्यता की दृष्टि से देखना है । हमें उस उपकरण को ग्रहण करना है जो हमारे उस कार्य को सर्वोत्तम रूप में करेगा जो हम भविष्य में करना चाहते हैं और मैं इस बात के लिए आपके साथ सहमत हूं महोदय कि यह अत्यधिक दुःखपूर्ण

बात होगी, अत्यधिक निराशावादी उदाहरण होगा हमारी असमर्थतता का कि हम इतने महत्वपूर्ण विषय पर किसी सहमत निष्कर्ष पर नहीं पहुंच पाते हैं यदि इस मुद्दे पर हमें सदन को विभाजित करना पड़ता है । मैं आश्वस्त हूं कि सद्बुद्धि अभिभावी होगी ।''

मुझे सोचना चाहिए कि इस समय भी वह आशंका, जिसे श्री गोपाला स्वामी अयंगर द्वारा आवाज दी गई थी, समाप्त नहीं हुई है । मेरे अनुसार हम अभी तक उस प्रक्रम पर नहीं पहुंचे हैं जिस पर हिंदी भाषा अंग्रेजी को प्रतिस्थापित कर सके । वह स्थिति जो आज है लंबे समय तक बनाए रखनी होगी । अभी यह समय नहीं है जब संसदीय राजभाषा समिति द्वारा सिफारिश किए गए रूप में संविधान के अनुच्छेद 348 का संशोधन किया जाए । अभी यह समय बिल्कुल नहीं है कि उच्च न्यायालयों/उच्चतम न्यायालय से अपने निर्णय और डिक्रियों को हिंदी में देना प्रारंभ करने के लिए कहा जाए ।

हिंदी भाषा की अब क्या स्थिति है । आज हिंदी में शिक्षा का क्या मानक है । हिंदी कितनी बढ़ी है कि वह समिति की सिफारिशों में अंतर्वलित स्थिति का सामना करने के लिए खड़ी हो सके । मैं इस सुझाव में कोई विद्वतापूर्ण प्रलोभन नहीं पाता हूं । इस सुझाव से सहमत होना बहुत शीघ्रता होगी । प्रश्न विधि के खाली पृष्ठों को भरने से संबंधित नहीं है । यह प्रश्न भारग्रस्त है । मैं अपनी उलझन के लिए दुख प्रकट करता हूं किंतु मुझे समिति के प्रति विनम्र माफी के साथ यह कहना है कि समिति द्वारा सुझाव गए आधारों पर जल्दी में कोई संशोधन केवल इस कारण से नहीं किया जाना चाहिए कि विधानमंडल/संसद संवैधानिक धैर्यहीनता से कष्ट उठा रहे हैं । एक गलती दूसरे का मार्ग प्रशस्त करती है । ''भाषा'' के संबंध में संवैधानिक संशोधनों के प्रश्न पर गंभीर रूप से विचार किया जाना चाहिए । विशेष रूप से जब विधान कोई धर्म-पत्र नहीं है और आगे, अंग्रेजी एक लुभावना खजाना है । 1949 में स्थिति उससे भिन्न थी जो 2007 में है । प्रौद्योगिकी ने इस क्लिक करने वाले, क्लिप करने वाले, पर्दे के चौंधियाने वाले संसार में

हमारे मस्तिष्कों को परिवर्तित कर दिया है । ये ई-लर्निंग और वैश्वीकरण के दिन हैं । रूस और चीन तक ने भाषा पर अपने विचार बदल दिए हैं । सभी मोर्चों - सामाजिक, राजनीतिक, शैक्षणिक, प्रादेशिक आदि - पर परिवर्तन है । भारत में केवल हिंदी बोलने वाले क्षेत्र नहीं है । संवैधानिक गलियारा हिंदी का परिरक्षित क्षेत्र नहीं है । प्रादेशिक भाषाएं विकसित हुई हैं, वास्तव में अत्यधिक विकसित हुई हैं । यहां भाषा पर आधारित राज्यों के पुनर्गठन ने बड़ी भूमिका निभाई है और यह कि हिंदी भाषा के विरुद्ध निभाई हैं । इन दिनों में अपने निर्णयों को देने वाले संवैधानिक न्यायालयों की स्थिति अकल्पनीय है । उच्च न्यायालयों और उच्चतम न्यायालय द्वारा न्याय के प्रशासन से संबंधित कोई भी व्यक्ति इस सुझाव के प्रति अपना विरोध प्रकट करने के लिए थोड़े संकोच से तैयार हो जाएगा । जब हम संविधान, संगठन तथा उच्च न्यायालयों और उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति की पद्धति की ओर ध्यान देते हैं तो हमें हिंदी में निर्णय देने वाले न्यायाधीशों की विशेष रूप से भाषा की सम्माननीय अज्ञानता वाले न्यायाधीशों की घोर असंभवता देखने में कोई कठिनाई नहीं होगी । संवैधानिक न्यायालयों के निवासियों की शांति भंग नहीं की जानी चाहिए ।

दिन के अंत में मैं केवल एक निष्कर्ष निकाल सकता हूं और वह यह है कि अभी ''भाषा'' के संबंध में, विशेष रूप से संविधान के अनुच्छेद 348 के संबंध में, संसदीय राजभाषा समिति की सिफारिश के आधारों पर कार्य करने का समय नहीं आया है । संविधान के अनुच्छेद 343 में अनुबद्ध पन्द्रह वर्षों की कालावधि का परिवर्तित स्थिति में, जो अब से लंबे समय तक उक्त अनुबंध का पालन करना असंभव बनाती है, कभी भी पालन नहीं किया जा सकता । समय अनुबंध के विरुद्ध परिवर्तित हो गया है । अनुबंध के पक्ष में स्थिति का सुधार नहीं हुआ है । भाषा के प्रश्न पर भूले हुए राजनीतिज्ञों/राजनेताओं की हल्की सिसकियाँ लंबे समय तक बंद नहीं होंगी ।

जिद्दी होना विवेकपूर्ण नहीं है ।''

तमिलनाडु और पुडुचेररी विधिक परिषद्

2007 का संकल्प सं. 189 तारीख 24.11.2007

"यह एकमत से संकल्प किया जाता है कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 348 का संशोधन करने के लिए संसदीय राजभाषा समिति की सिफारिशों का, जैसी वे मद्रास ला जर्नल (2007) भाग 5 में दी गई है, कठोर रूप से विरोध किया जाए । उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों के निर्णय हिंदी में देने का प्रस्ताव निश्चित रूप से गैर हिंदी भाषी क्षेत्रों में जनता के, विभिन्न सरकारी अधिकारियों और बार तथा न्यायपीठ के सदस्यों के अधिकारों पर प्रतिकूल रूप से प्रभाव डालेगा । यह प्रस्ताव तुरंत गिराया जा सकता है और अंग्रेजी में निर्णय देने की विद्यमान पद्धति बनी रहनी चाहिए । यह आगे संकल्प किया जाता है कि एक ब्यौरेवार ज्ञापन अध्यक्ष विधि आयोग, विधि और न्याय मंत्रालय, भारत सरकार को भारत की विधिज्ञ परिषद् और सभी राज्य विधिज्ञ परिषदों को प्रति के साथ भेजा जाए ।"

"भारत के संविधान के अनुच्छेद 348(घ) और (ङ) के संशोधन के बारे में बार को की गई विधि आयोग की अपील के प्रति निर्देश से, हमने पहले ही उपर्युक्त विषय के संबंध में हमारे द्वारा पारित एकमत संकल्प की प्रति आपको भेज दी है ।

उसी के क्रम में हम इसके द्वारा इस विषय पर ज्ञापन आपके ध्यानपूर्वक पढ़ने और विचारण के लिए प्रस्तुत कर रहे है :-

(क) संसदीय राजभाषा समिति द्वारा सुझाव दिया गया संविधान का प्रस्तावित संशोधन तमिलनाडु और पुडुचेररी विधिज्ञ परिषद् द्वारा स्वीकार नहीं किया गया है ।

(ख) प्रस्तावित संशोधन भारतीय जनता के बड़े भाग पर उनकी इच्छा के विरुद्ध एक अनजान भाषा को अधिरोपित करेगा ।

(ग) इससे उच्च न्यायालयों में मामलों का निष्कर्ष निकालने में बहुत सी व्यावहारिक समस्याएं आएंगी क्योंकि अधिकांश न्यायाधीश, अधिवक्ता और लगभग सभी मुकदमा लड़ने वाली जनता हिंदी भाषा से सुपरिचित नहीं है ।

(घ) जनता के बड़े भाग पर किसी अनजान भाषा का प्रसार करने से भारत के सामान्य तंतु में बाधा पड़ सकती है और इसके परिणामस्वरूप सामाजिक बाधाएं और साथ ही विधि और व्यवस्था संबंधी समस्याएं हो सकती हैं ।

इन परिस्थितियों में हम, तमिलनाडु और पुडुचेरी की विधिज्ञ परिषद् उच्च न्यायालयों और उच्चतम न्यायालय में अंग्रेजी को हिंदी भाषा द्वारा प्रतिस्थापित करने के किसी कदम का कठोर रूप से विरोध करते हैं ।''

यद्यपि डा. न्यायमूर्ति ए. एस. आनंद, न्यायमूर्ति आर. सी. लोहाटी, न्यायमूर्ति एस. एन. वारियावा, न्यायमूर्ति रुमापाल, श्री अरुण जेटली, श्री के. परासरन, श्री सोली सोराबजी और श्री राजीव धवन से राय मांगी गई थी, किंतु उनसे कोई उत्तर प्राप्त नहीं हुआ है । इसी प्रकार उच्चतम न्यायालय विधिज्ञ संगम, उच्चतम न्यायालय अभिलेख अधिवक्ता संगम, कर्नाटक उच्च न्यायालय अधिवक्ता संगम और मद्रास, मुंबई, कोलकाता, नई दिल्ली, हिमाचल प्रदेश, मध्य प्रदेश, उड़ीसा, पटना, पंजाब और हरियाणा, राजस्थान के उच्च न्यायालय संगमों से भी कोई उत्तर प्राप्त नहीं हुआ है ।

निष्कर्ष

मैंने गंभीरता से और सावधानीपूर्वक विवाद्यक प्रश्न पर विचार किया है । उच्चतम न्यायालय के सभी सेवानिवृत्त माननीय न्यायाधीशों और उच्चतम न्यायालय के मुख्य न्यायमूर्ति और उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों और वकीलों का एकमत से विचार है कि संविधान को विधायी विभाग को हिंदी में मूल रूप से प्रारुण करने का कार्य हाथ में लेने में समर्थ बनाने के लिए संशोधित नहीं किया जाना चाहिए और यह कि इस प्रस्ताव का

दृढ़तापूर्वक विरोध किया गया है । विद्वान् न्यायाधीशों की भी यही राय है कि चूंकि उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों के न्यायाधीश संपूर्ण भारत से लिए जाते हैं और वे सभी हिंदी से सुपरिचित नहीं होते हैं, अतः उनसे हिंदी में अपने निर्णय देने के लिए नहीं कहा जाना चाहिए । इसके अतिरिक्त देश की एकता और एकीकरण पर भाषा संबंधी अंधभक्ति से निःसंदेह प्रभाव पड़ेगा और उच्चतम न्यायालय तथा उच्च न्यायालयों में अंग्रेजी से हिंदी में परिवर्तन से संपूर्ण देश में राजनीतिक और विधिक अशांति का सृजन होगा, जिससे बचा जा सकता है ।

न्यायमूर्ति बी. आर. कृष्णा अय्यर की राय थी कि वे व्यक्तिगत अधिमान के रूप में पूर्ण रूप से हिंदी के लिए हैं किंतु विवशता द्वारा हिंदी लाए जाने के पूर्ण रूप से विरोधी हैं विशेष रूप से उच्चतम न्यायालय के निर्णयों में । उन्होंने राष्ट्रीय अभिव्यक्ति में हिंदी को उच्च स्थान दिए जाने और प्रत्येक व्यपदेशन का, जिसे जनता निःशुल्क विधिक सहायता के अभिन्न भाग के रूप में उच्चतर न्यायालयों में करना चाहती है, तुरंत अनुवाद कराने की पूर्ण सुविधा देने का भी सुझाव दिया ।

न्यायमूर्ति बी. एन. श्री कृष्णा का सुविचारित दृष्टिकोण है कि उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों से हिंदी में निर्णय देने की अपेक्षा करने के प्रस्ताव का परिणाम निश्चित रूप से अव्यवस्था में होगा और उससे न्याय के प्रशासन पर प्रभाव पड़ेगा ।

भारत के भूतपूर्व मुख्य न्यायमूर्ति श्री न्यायमूर्ति एम. एन. वैंकटचलैया कहते हैं कि यह अभिस्वीकार किया जाना चाहिए कि हमारी राष्ट्रभाषा के रूप में हिंदी को हमारे राष्ट्रीय जीवन के सभी क्षेत्रों में अपने अधिकारपूर्ण स्थान की अधिकारपूर्वक मांग करनी चाहिए और उच्चतर न्यायपालिका भी इसका कोई अपवाद नहीं होनी चाहिए । तथापि उन्होंने यह कहा कि संसदीय विचारों का सम्मान किया जाना चाहिए और इस संबंध में प्रारंभ किया जाना चाहिए यद्यपि सावधानी यह अपेक्षा करती है कि हमें शीघ्रता से धीरे-धीरे आगे बढ़ना चाहिए ।

न्यायमूर्ति जगन्नाथ शेट्टी, उच्चतम न्यायालय के भूतपूर्व न्यायाधीश की यह राय है कि उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों से अपने निर्णयों और डिक्रियों को हिंदी में देना प्रारंभ करने के लिए नहीं कहा जा सकता और यह कि यह बहुत-बहुत विवादग्रस्त मुद्दा है, जिसके दूरगामी परिणाम हो सकते हैं ।

श्री न्यायमूर्ति ए. एम. अहमदी, भारत के भूतपूर्व मुख्य न्यायमूर्ति की यह राय है कि उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों से हिंदी के लिए परिवर्तन करने के लिए कहना उचित नहीं होगा । उनकी यह राय थी कि छलांग लगाने के लिए आधार उपलब्ध नहीं है और राज्य के उच्च न्यायालय में हिंदी प्रारंभ करने का विषय संविधान के अनुच्छेद 348(2) के अधीन राज्य के राज्यपाल के निर्णय पर छोड़ देना बुद्धिमतापूर्ण होगा और यह कि वह इसका विनिश्चय करने के लिए सर्वोत्तम न्यायाधीश होगा कि अभी उस दिशा में कदम उठाने के लिए समय परिपक्व है या नहीं ।

न्यायमूर्ति संतोष हेगड़े, भारत के उच्चतम न्यायालय के भूतपूर्व न्यायाधीश का यह विचार है कि यह कदम न तो राजनीतिक रूप से बुद्धिमत्तापूर्ण है और न सांविधानिक रूप से सही और इसलिए वह इस कदम का कठोर रूप से विरोध करते हैं ।

श्री न्यायमूर्ति एस. एस. एम. क्वाद्री, भूतपूर्व न्यायाधीश, भारत का उच्चतम न्यायालय की यह राय है कि हमारे देश में स्थितियां ऐसा संशोधन करने के लिए और उच्च न्यायालयों तथा उच्चतम न्यायालय से हिंदी में निर्णयों और आदेशों को देना प्रारंभ करने की अपेक्षा करने वाले निदेश जारी करने के लिए परिपक्व नहीं हैं और, इसलिए इन कारणों से और बहुत से अन्य कारणों से हिंदी में निर्णयों, आदेशों, डिक्रियों आदि को बोलकर लिखाना प्रारंभ करने का प्रयोग पूर्ण रूप से निष्फल होगा ।

श्री न्यायमूर्ति के. एस. परिपूर्णन, भूतपूर्व न्यायाधीश, उच्चतम न्यायालय ने भी

संविधान के अनुच्छेद 348 का संशोधन करने के प्रस्ताव के विरुद्ध अपनी राय प्रकट की है, जिसमें 1949 से होने वाली विश्व घटनाओं तथा उन संपूर्ण परिस्थितियों का ध्यान रखा गया है, जिन से हमने अंग्रेजी भाषा को स्वीकार किया है, ग्रहण किया है और उसका पर्याप्त रूप से लाभ उठाया है ।

श्री के. के. वेणुगोपाल, वरिष्ठ अधिवक्ता ने यह विचार प्रकट किया है कि संसदीय समिति की सिफारिशों को कार्यान्वित करने का प्रयास भारत की जनता में विभाजकता और उसके बीच जबर्दस्त विरोध लाएगा ।

केवल तीन उच्च न्यायालय अधिवक्ता संगमों ने अपनी राय देने के लिए हमारे अनुरोध का उत्तर दिया है । आंध्र प्रदेश अधिवक्ता संगम, केरल उच्च न्यायालय अधिवक्ता संगम और पांडिचेरी अधिवक्ता संगम ने इस प्रस्ताव का विरोध करते हुए संकल्प पारित किए हैं ।

किसी राष्ट्र के नागरिकों के लिए भाषा अत्यधिक भावनात्मक मुद्दा है । इसमें एकबद्ध करने की बड़ी शक्ति है और यह राष्ट्रीय एकीकरण के लिए एक शक्तिशाली उपकरण है । कोई भी भाषा जनता के किसी भाग पर उसकी इच्छा के विरुद्ध नहीं थोपी जानी चाहिए क्योंकि इससे हानि होने की संभावना होती है ।

यह केवल विचार और अभिव्यक्ति का साधन नहीं है किंतु उच्चतर स्तर पर न्यायाधीशों के लिए यह उनकी विनिश्चय करने वाली प्रक्रिया का एकीकृत भाग है । न्यायाधीशों को दोनों पक्षों को सुनना होता है, प्रतिवेदनों को समझना होता है और विधि को साम्याओं को समायोजित करने के लिए लागू करना होता है । साधारणतया उच्चतर न्यायालयों में तर्क अंग्रेजी में दिए जाते हैं और भारतीय पद्धति के अधीन आधारभूत साहित्य प्राथमिक रूप से अंग्रेजी और अमेरिकन पाठ्य-पुस्तकों तथा निर्णयज विधियों पर आधारित है । इस प्रकार उच्चतर स्तर पर न्यायाधीशों को

निर्णय देने के लिए अपना स्वयं का ढांचा विकसित करने के लिए स्वतंत्र छोड़ दिया जाना चाहिए ।

इस पर ध्यान देना विशेष रूप से महत्वपूर्ण है कि उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के संबंध में राष्ट्रीय स्थानांतरण की नीति की दृष्टि से, यदि किसी ऐसे न्यायाधीश को किसी ऐसी भाषा में निर्णय देने के लिए विवश किया जाता है जिससे वह सुपरिचित नहीं है तो यह उसके लिए न्यायिक रूप से कार्य करने के लिए अत्यधिक कठिन हो सकता है । देश के एक भाग से दूसरे में स्थानांतरण पर उच्च न्यायालय के न्यायाधीश से यह आशा नहीं की जाती है कि वह अपनी उस उम्र में नई भाषा सीखे और उसे निर्णयों को देने में लागू करे ।

किसी भी प्रकार कोई भाषा उच्चतर न्यायपालिका के न्यायाधीशों पर थोपी नहीं जानी चाहिए और उन्हें अपने निर्णय उस भाषा में, जिसे वे अधिमान देते हैं, देने के लिए स्वतंत्र छोड़ दिया जाना चाहिए । यह याद रखना महत्वपूर्ण है कि प्रत्येक नागरिक, प्रत्येक न्यायालय को उच्चतम न्यायालय द्वारा अंतिम रूप से अधिकथित की गई विधि को समझने का अधिकार है और इस समय इस बात को समझा जाना चाहिए कि ऐसी एक भाषा केवल अंग्रेजी है ।

अंग्रेजी भाषा का प्रयोग वकीलों की गतिविधियों को उच्च न्यायालयों से उच्चतम न्यायालय में आसान बनाता है क्योंकि उन्हें किसी भाषा संबंधी समस्या का सामना नहीं करना पड़ता है और दोनों स्तरों पर भाषा अंग्रेजी रहती है । साधारण रूप से समाज का या उसके भिन्न भागों का कोई सर्वेक्षण स्पष्ट रूप से उक्त प्रतिपादना की पुष्टि करेगा जिसे अधिक बहस की, विशेष रूप से वर्तमान राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक परिदृश्य में, आवश्यकता नहीं है ।

एच.एम. सीरवाई की भारत की संवैधानिक विधि, 1996 संस्करण, वॉल्यूम-III, पृष्ठ

2585 का पैरा 23.10 निम्नलिखित रूप में है :

''यदि न्याय प्रशासन और न्यायपीठ तथा बार की एकता को परिरक्षित करना है तो यह आशा की जाती है कि ऐसी अनुज्ञा नहीं दी जाएगी । प्रविष्टि 78, सूची 1 प्रकट रूप से संसद को विधान बनाने की शक्ति प्रदान करती है । उच्च न्यायालयों के समक्ष विधि व्यवसाय करने के लिए हकदार व्यक्तियों के संबंध में अधिवक्ता अधिनियम, 1961 ने भारत की एकीकृत स्वायत्त भारत की बार का सृजन किया है । आज विधि व्यवसाय एक संगठित व्यवसाय है जो संपूर्ण भारत में व्यवसाय करने का हकदार है । यदि भिन्न उच्च न्यायालयों की भाषा भिन्न होगी जो संपूर्ण भारत में विधि व्यवसाय करने का अधिकार व्यावहारिक रूप से भ्रमपूर्ण हो जाएगा और प्रत्येक उच्च न्यायालय अपनी स्वयं की भाषा के अवरोध से पृथक हो जाएगा । यह अन्य न्यायालयों के निर्णयों से प्राप्त होने वाली सहायता से वंचित हो जाएगा और केंद्रीय विधियों का एकरूप निर्वचन, जो कि न्यायिक प्रशासन में इतना वांछनीय है, अप्राप्य हो जाएगा । उच्चतम न्यायालय के कार्य और उच्चतम न्यायालय के लिए न्यायाधीशों की भर्ती पर बड़ा प्रभाव पड़ेगा, उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों को उन न्यायालयों से भर्ती नहीं किया जा सकेगा, जहां भाषा उससे भिन्न हैं जो उच्चतम न्यायालय में बोली जाती है । न्यायिक प्रशासन पर उच्चतम न्यायालय के एकबद्ध करने वाले प्रभाव का, यदि वह नष्ट भी नहीं होगा तो, गंभीर रूप से ह्रास होगा और उसके न्यायाधीशों की और उसके निर्णयों की क्वालिटी की आवश्यक रूप से हानि होगी ।''

तथापि यह स्वीकार किया जा सकता है कि जहां तक विधायी प्रारुपण का संबंध है प्रत्येक विधान का, यद्यपि प्राधिकृत रूप से उसको अंग्रेजी में अधिनियमित किया जाता है, हिंदी में प्राधिकृत अनुवाद केंद्रीय स्तर पर उसके साथ रखा जा सकता है । इसी समानता

को केंद्रीय स्तर पर कार्यपालिका के कार्यों के संबंध में भी लागू किया जा सकता है किंतु जैसा ऊपर प्रस्तुत किया गया है उच्चतर न्यायपालिका को वर्तमान सामाजिक संदर्भ में किसी प्रकार के अनुरोधात्मक परिवर्तन के भी अधीन नहीं किया जाना चाहिए ।

हम तदनुसार सिफारिश करते हैं ।

(डा. न्यायमूर्ति एआर. लक्ष्मणन्)

अध्यक्ष

(प्रो. डा. ताहिर महमूद)

सदस्य

(डा. ब्रह्म ए. अग्रवाल)

सदस्य-सचिव